# क्षा-सूत्राणि

[-पाणिनि-चन्द्रगोमि-विरचितानि]

सम्पादक—
युधिष्ठिर मीमांसक

# रामलाल कपूर ट्रस्ट का संक्षिप्त परिचय

**स्थापना**—२६ फरवरी १९२८ को माननीय श्री रामलाल जी कपूर (अमृतसर) के स्वर्गवास के पश्चात् उनके सुपुत्रों सर्व श्री रूपलाल जी कपूर, हंसराज जी कपूर, ज्ञानचन्द जी कपूर, तथा प्यारेलाल जी कपूर ने अपने स्वर्गीय पिता जी की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के लिये यह धर्मार्थ ट्रस्ट स्वर्गीय श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु के सहयोग से स्थापित किया।

**ट्रस्ट के उद्देश्य**—प्राचीन वैदिक साहित्य का अन्वेषण, रक्षा तथा प्रचार, एवं भारतीय संस्कृति, भारतीय शिक्षा, भारतीय विज्ञान और चिकित्सा द्वारा जनता की सेवा।

**ट्रस्ट के प्रधान और मन्त्री**—प्रथम प्रधान स्वर्गीय महात्मा हंसराज जी रहे। उनके बाद स्व० श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु, स्व० श्री पं० भगवद्दत्त जी रिसर्चस्कालर, स्व० श्री वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री रहे। अब श्री पं० युधिष्ठिर जी मीमांसक प्रधान हैं। आद्य मन्त्री स्व० श्री रूपलाल जी कपूर थे। उनके पश्चात् स्व० श्री बा० हंसराज जी कपूर रहे। अब श्री बा० प्यारेलाल जी कपूर हैं।

**ट्रस्ट का कार्य**—ट्रस्ट की ओर से इस समय निम्न कार्य हो रहे हैं—

१. वैदिक वाङ्मय का अनुसन्धान वा प्रकाशन।

२. पाणिनि-महाविद्यालय (आर्षपाठ-विधि के अनुसार)।

३. बृहत् पुस्तकालय—वेद और व्याकरणादि विषयों में शोध-कार्य के लिये उपयोगी अत्यन्त दुर्लभ मुद्रित तथा हस्तलिखित ग्रन्थों का संग्रह।

४. वेदवाणी (मासिक-पत्रिका) का प्रकाशन।

५. प्रेस—सब प्रकार के वैदिक सस्वर ग्रन्थ छापने योग्य।

अनुसंधान व प्रकाशन कार्य के रूप में ट्रस्ट की ओर से अब तक वेद, कर्मकाण्ड, अध्यात्म, व्याकरण, निरुक्त, इतिहास, राजनीति आदि विविध विषयों के लगभग ९० ग्रन्थ छप चुके हैं। ट्रस्ट ने ऋषि दयानन्द सरस्वती कृत ग्रन्थों के भी शुद्ध सुन्दर शोधपूर्ण विशिष्ट संस्करण प्रकाशित किये हैं।

# शिक्षा-सूत्राणि

## आपिशलि-पाणिनि-चन्द्रगोमि-विरचितानि






सम्पादकः—
युधिष्ठिर मीमांसक

प्रकाशक—

रामलाल कपूर ट्रस्ट
बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा)
पिन—१३१०२१

तृतीय संस्करण ५००
सं० २०४०, सन् १९८३
मूल्य ६-००
सजिल्द ८-००

मुद्रक—
शान्तिस्वरूप कपूर
रामलाल कपूर ट्रस्ट प्रेस
बहालगढ़ (सोनीपत-हरयाणा)



# भूमिका

वेद के छः अङ्गों में शिक्षा प्रथम अङ्ग है। बालकों की शिक्षा का आरम्भ इसी शास्त्र से होता है। आजकल वर्णों के यथातथ उच्चारण की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। इस कारण वर्णों के उच्चारण में बहुविध दोष देखने में आते हैं। वर्णों के ठीक-ठीक उच्चारण की ओर बचपन में ही ध्यान न दिया जाए तो यह दोष महाविद्वान् हो जाने पर भी आजन्म बना रहता है। इसलिए वर्णों के ठीक-ठीक उच्चारण की ओर प्रत्येक माता पिता आचार्य को पूरा-पूरा ध्यान देना चाहिए। वर्णों के यथातथ उच्चारण न होने से वक्ता जिस अभिप्राय से शब्दों का उच्चारण करता है, श्रोता उस अर्थ को ग्रहण करनें में असमर्थ रहता है। अत एव प्राचीन आचार्यों ने कहा है—

> शब्दो हीनः स्वरतो वर्णतो वा मिथ्या प्रयुक्तो न तमर्थमाह।
> स वाग्वज्रो यजमानं हिनस्ति यथेन्द्रशत्रुः स्वरतोऽपराधात्॥

इसी प्रकार अन्यत्र भी कहा है—

**स्वजनः श्वजनो मा भूत् सकलं शकलं सकृत् शकृत्।**

अर्थात् स्वजन (=अपना व्यक्ति) को यदि कोई 'श्वजन' इस प्रकार उच्चारण करे तो उसका अर्थ होगा 'कुत्ते का सम्बन्धी', सकल (=सम्पूर्ण) का उच्चारण 'शकल' किया जाय तो अर्थ होगा टुकड़ा'। इसी प्रकार यदि सकृत् (एक बार) के स्थान पर 'शकृत्' उच्चारण हो जाए तो उसका अर्थ होगा 'मैला' (विष्ठा—पाखाना)।

इसी प्रकार यदि अश्व (=घोड़ा) के स्थान पर 'अस्व' उच्चारण किया जाए तो अर्थ होगा 'अपना नहीं' (न स्वः=अस्वः)। इसी प्रकार शास्त्री को 'सास्त्री' बोला जाए तो अर्थ हो जाएगा 'वह स्त्री'।

इन कतिपय उदाहरणों से स्पष्ट है कि वर्णों के यथातथ रूप से उच्चारण न करने से कितना अर्थान्तर हो जाता है। इतना ही नहीं, समस्त बोलियों की उत्पति का यदि इतिहास देखा जाए तो ज्ञात होगा कि एक

से दूसरी बोली की उत्पत्ति में वर्णोच्चारण सम्बन्धी दोषों का ही प्रमुख हाथ है।

इसलिए प्राचीन ऋषि मुनि और आचार्यों ने वर्णों के यथातथ उच्चारण की रक्षा के लिए वर्णोच्चारण सम्बन्धी अनेक शिक्षा ग्रन्थ लिखे। इतना ही नहीं, उन्होंने इस अतिस्वल्पकाय शास्त्र को इतना महत्त्वपूर्ण समझा कि वेद के छः अङ्गों में इसे प्रथम स्थान दिया।

इस समय शिक्षा सम्बन्धी जो ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं उनकी संख्या १०० से ऊपर है। इसमें से लगभग ४० ग्रन्थ छप चुके हैं, शेष अभी तक हस्तलिखित रूप में ही प्राचीन संग्रहालयों में सुरक्षित पड़े हैं।

सम्प्रति जितने शिक्षा ग्रन्थ उपलब्ध होते हैं, उनमें अधिक संख्या वेद की विभिन्न संहिताओं और शाखाओं से सम्बन्ध रखने वाले ग्रन्थों की है। लोक-वेद-साधारण अथवा सामान्य वर्णोच्चारण से सम्बन्ध रखने वाले तीन ही शिक्षा ग्रन्थ सम्प्रति उपलब्ध होते हैं। उनके नाम हैं—आपिशल-शिक्षा, पाणिनीय-शिक्षा, चान्द्र-शिक्षा।

आचार्य आपिशलि, पाणिनि और चन्द्रगोमी ने अपने-अपने जो शब्दानुशासन लिखे वे भी लोकवेद-साधारण ही थे।[1] इन उक्त तीनों शिक्षा ग्रन्थों का अपने-अपने व्याकरण के साथ भी घनिष्ठ सम्बन्ध है, यह भी इनके शिक्षा और व्याकरण ग्रन्थों के परिशीलन से स्पष्ट है।

## आपिशल-शिक्षा

महामुनि आपिशलि प्रोक्त शिक्षा चिरकाल से अप्राप्य थी। केवल प्राचीन ग्रन्थों में यत्र तत्र आपिशलशिक्षा का उल्लेख उपलब्ध होता था। लगभग ३२ वर्ष हुए श्रीमान् डा० रघुवीरजी एम०ए० संस्थापक 'सरस्वती-

---

१. आपिशलि प्रोक्त व्याकरण के जो सूत्र उपलब्ध हुए हैं, उनसे आपिशल व्याकरण का लोकवेद-साधारणत्व स्पष्ट है। पाणिनीय व्याकरण का लोकवेद-साधारणत्व सुप्रसिद्ध है। चान्द्र व्याकरण में भी स्वरवैदिकी प्रक्रिया विद्यमान थी, वह उसकी टीका में यत्र तत्र उपलब्ध स्वरवैदिकी प्रक्रिया सम्बन्धी सूत्रों से स्पष्ट है। इस विषय में हमने अपने 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास' ग्रन्थ में विस्तार से लिखा है। वहां अनेक प्रमाणों से दर्शाया है कि चान्द्र व्याकरण में पहले आठ अध्याय थे, उनमें से स्वरवैदिक प्रक्रिया सम्बन्धी दो अध्याय उत्तरकाल में लुप्त हो गए।





विहार' देहली ने अडियार (मद्रास) के पुस्तकालय से इस शिक्षा के दो हस्तलेख प्राप्त करके इसका सम्पादन किया। यह शिक्षा उनके द्वारा सम्पादित और मेहरचन्द लक्ष्मणदास हिन्दी-संस्कृत-पुस्तक विक्रेता लाहौर द्वारा प्रकाशित 'वैदिक स्टडीज' में प्रकाशित हुई।

आचार्य पाणिनि ने **वा सुप्यापिशलेः** (६, १, ९२) सूत्र में आचार्य आपिशलि का साक्षात् उल्लेख किया है। इस से स्पष्ट है कि आचार्य आपिशलि पाणिनि से पूर्ववर्ती है। कितना पूर्ववर्ती है, यह कहना कठिन है।

आचार्य आपिशलि ने व्याकरण शास्त्र का भी प्रवचन किया था, यह पाणिनि के उक्त निर्देश से ही स्पष्ट है। आपिशलि के शब्दानुशासन में भी आठ अध्याय थे। यह अभिनव शाकटायन व्याकरण को अमोघा वृत्ति के **अष्टका आपिशलपाणिनीयाः** उदाहरण से स्पष्ट है।

आपिशल व्याकरण के जो सूत्र उपलब्ध हुए हैं वे पाणिनीय शब्दानुशासन के सूत्रों के साथ बहुत सादृश्य रखते हैं। इसी प्रकार आपिशल-शिक्षा और पाणिनीय-शिक्षा के सूत्र भी परस्पर बहुत सदृश हैं, कुछ साधारण सी भिन्नता है।

आपिशलि आचार्य ने अपने व्याकरण से सम्बद्ध धातुपाठ और गण-पाठ आदि परिशिष्टों का भी प्रवचन किया था। उसके धातुपाठ और गणपाठ सम्बन्धी अनेक उदाहरण प्राचीन ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं। हमारा विचार है कि उपलब्ध पञ्चपादी उणादि आपिशलि द्वारा प्रोक्त हैं (द्र० सं० व्या० शास्त्र का इतिहास भाग २, उणादि प्रकरण)।

आपिशलि द्वारा प्रोक्त व्याकरण और उसके परिशिष्ट तथा काल आदि के सम्बन्ध में हमने अपने 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास' ग्रन्थ में विस्तार से लिखा है। जो महानुभाव इस विषय में जानना चाहें, वह हमारे उक्त इतिहास के उन-उन प्रकरणों में देखें।

**आपिशल-शिक्षा के उद्धरण**—आपिशल-शिक्षा के उद्धरण निम्न ग्रन्थों में उपलब्ध होते हैं—

१—राजशेखर ने काव्यमीमांसा में शास्त्रनिर्देश नामक द्वितीय अध्याय में लिखा है—

**तत्र वर्णानां स्थानकरणप्रयत्नादिभिः निष्पत्तिनिर्णायिनी शिक्षा आपिशलीयादिका।**

२—भर्तृहरि ने वाक्यपदीय की स्वोपज्ञटीका[1] (लाहौर संस्क०) पृष्ठ १०४ में अष्टम प्रकरण का **नाभिप्रदेशात्** सूत्र उद्धृत किया है। स्वोपज्ञ टीका के व्याख्याता वृषभदेव ने इसे आपिशलीय-शिक्षा का वचन बताया है। यदि वृषभदेव का व्याख्यान किसी प्राचीन व्याख्या के आधार पर आधृत हो तो मानना पड़ेगा कि भर्तृहरि ने आपिशल शिक्षा का उक्त सूत्र अक्षरशः न पढ़कर अर्थतः अनुवाद किया है।

३—आचार्य हेमचन्द्र ने हैमशब्दानुशासन (१, १, १७) की स्वोपज्ञ बृहद् वृत्ति और बृहन्न्यास में आपिशलि का नामोल्लेख पूर्वक अष्टम प्रकरण के २३ सूत्र और विना नाम निर्देश के अन्य १४-१५ सूत्र उद्धृत किए हैं।

४—तैत्तिरीय प्रातिशाख्य के 'वैदिकाभरण' नामक टीका के लेखक गार्ग्य गोपाल ने नामनिर्देश पूर्वक तथा विना नामनिर्देश के आपिशलि शिक्षा के कई सूत्र उद्धृत किए हैं।

५—गोण्डल (सौराष्ट्र) की 'रसशाला' नामक आयुर्वेद प्रतिष्ठान के हस्तलेखों के संग्रह में 'शब्दभाष्य'[2] नाम से स्मृत ग्रन्थ का कुछ प्रारम्भिक भाग है। उसमें शिक्षा के प्रकरण ३ तथा ८ के अनेक सूत्र उद्धृत हैं (द्र० पत्रा ३, ४, ५,)। यद्यपि ये सूत्र आपिशल और पाणिनीय दोनों शिक्षा-सूत्रों से साम्य रखते हैं, परन्तु पत्रा ५ के पृष्ठ 'क' पर—प्रागुक्तं तु मतान्तरम्, न पाणिनीयम्' लेख मिलता है। उससे ज्ञात होता है कि शब्दभाष्य में स्मृत सूत्र आपिशल शिक्षा के हैं, पाणिनीय नहीं है। इतना ही नहीं, शब्दभाष्य में स्मृत शिक्षासूत्रों के पाठ पाणिनीय सूत्रों की अपेक्षा आपिशल शिक्षा से अधिक साम्य रखते हैं।

इनके अतिरिक्त काशिका, न्यास, पदमञ्जरी और शब्दकौस्तुभ आदि ग्रन्थों में भी शिक्षा के अनेक सूत्र उद्धृत हैं। ये सूत्र आपिशल शिक्षा से

---

१. वाक्यपदीय ब्रह्मकाण्ड की स्वोपज्ञ टीका का वृषभदेवीय व्याख्या सहित एक अभिनव संस्करण डक्कन कालेज पूना से प्रकाशित हुआ है। इसका सम्पादन श्री को० अ० सुब्रह्मण्य अय्यर (लखनऊ) ने किया है। इस संस्करण में वृषभदेवीय टीका प्रथम वार समग्र रूप में प्रकाशित हुई है। कई स्थानों पर इस संस्करण के पाठ लाहौर संस्करण से अच्छे हैं। इस संस्करण में उक्त पाठ १७६ पृष्ठ पर है।

२. ग्रन्थ के पत्रों पर "श भा" संकेत लिखा है, उसी के आधार पर सूचीपत्र बनाने वाले ने उक्त नाम की कल्पना की है।





उद्धृत किए गए अथवा पाणिनीय शिक्षा से यह कहना यद्यपि कठिन है तथापि आपिशल और पाणिनीय शिक्षा में जहां कुछ भिन्नता है, वहां ये सूत्र पाणिनीय शिक्षा सूत्रों से अधिक मिलते हैं। अतः हमारे विचार में उक्त ग्रन्थों में उद्धृत शिक्षासूत्र पाणिनीय शिक्षा से ही उद्धृत किये गए हैं। इतना ही नहीं, उक्त ग्रन्थ पाणिनीय व्याकरण के ही हैं। अतः उनमें नाम निर्देश के विना उद्धृत शिक्षासूत्र भी पाणिनीय ही होने चाहिए।

वाक्यपदीय, हैम बृहद्वृत्ति, हैम बृहन्न्यास, वैदिकाभरण टीका और शब्दभाष्य में उद्धृत आपिशल शिक्षासूत्रों का हमने यथास्थान निर्देश कर दिया है।

# पाणिनीय शिक्षा

पाणिनीय शिक्षा के सम्प्रति दो प्रकार के पाठ मिलते हैं एक सूत्रात्मक और दूसरा श्लोकात्मक। सूत्रात्मक और श्लोकात्मक पाठ के भी लघु और वृद्ध दो प्रकार के पाठ हैं।

आधुनिक पाणिनीय वैयाकरणों में पाणिनीय शिक्षा का श्लोकात्मक पाठ ही प्रसिद्ध है और वैदिक भी वेदाङ्ग अन्तर्गत श्लोकात्मक पाणिनीय शिक्षा का ही पाठ करते हैं। श्लोकात्मक पाणिनीय शिक्षा के लघुपाठ में ३५ श्लोक और वृद्धपाठ में ६० श्लोक हैं। लघुपाठ याजुष पाठ कहाता है और वृद्धपाठ ऋक्पाठ।

सूत्रात्मक शिक्षा के भी लघु और वृद्ध दो पाठ हैं। श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती ने सं० १९३६ के मध्य में प्रयाग से पाणिनीय शिक्षा सूत्रों का जो हस्तलेख प्राप्त किया था वह पाठ लघुपाठ है। स्वामी दयानन्द सरस्वती को प्राप्त शिक्षासूत्र का हस्तलेख अन्त में त्रुटित था। अतः उसमें अष्टम प्रकरण का प्रथम सूत्र भी अपूर्ण ही है। मध्य में भी कहीं-कहीं पर लेखक प्रमाद से कुछ सूत्र छूटे हुए प्रतीत होते हैं। पाणिनीय शिक्षा सूत्रों का जो पूर्ण पाठ हम छाप रहे हैं वह वृद्धपाठ है। यह बात दोनों पाठों की तुलना से स्पष्ट हो जाती है।

**मूल-पाठ**—पाणिनीय शिक्षा के श्लोकात्मक और सूत्रात्मक जो दो प्रकार के पाठ मिलते है; उनमें पाणिनि-प्रोक्त मूलपाठ कौन सा है इसका अति संक्षिप्त विवेचन किया जाता है।

श्लोकात्मिका पाणिनीय शिक्षा का प्रथम श्लोक है—

**अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि पाणिनीयं मतं यथा ।**

इस वचन से स्पष्ट है कि श्लोकात्मिका शिक्षा मूलतः पाणिनि-प्रोक्त नहीं है । वह तो किसी अन्य व्यक्ति द्वारा पाणिनीय मत के अनुसार बनाई गई है । श्लोकात्मिका पाणिनीय शिक्षा के प्रकाशनाम्नी टीका के रचयिता के मत में इसका प्रवक्ता पाणिनि का अनुज आचार्य पिङ्गल है ।[1] इस प्रकार ग्रन्थ को अन्तःसाक्ष्य और टीकाकार के साक्ष्य से सर्वथा स्पष्ट हैं कि श्लोकात्मिका पाणिनीय शिक्षा चाहे उसका लघु याजुष पाठ हो, चाहे वृद्ध आर्च पाठ, दोनों ही मूलतः पाणिनि प्रोक्त नहीं है । श्लोकात्मिका पाणिनीय शिक्षा का पाणिनि प्रोक्त मूल ग्रन्थ इनसे भिन्न है । हमारा मत है कि पाणिनीय श्लोकात्मिका शिक्षा का मूल पाणिनीय सूत्रात्मिका शिक्षा है ।[2]

श्लोकात्मिका पाणिनीय शिक्षा के पठन पाठन में अधिक प्रयुक्त होने के कारण सूत्रात्मक पाठ लुप्त हो गया, हस्तलेख भी अप्राप्य हो गए । श्लोकात्मिका शिक्षा मूलतः पाणिनि प्रोक्त नहीं है इस तथ्य को ओर सबसे पूर्व इस युग में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती का ध्यान गया । उन्होंने मूल-भूत पाणिनीय शिक्षा की प्राप्ति के लिए महान् प्रयत्न किया । अन्ततः वि० सं० १९३६ के मध्य में प्रयाग के एक ब्राह्मण के गृह से पाणिनीय शिक्षा सूत्र का एक हस्तलेख मिला । यद्यपि वह हस्तलेख भी अधूरा था, अन्त के एक या दो पत्र नष्ट हो चुके थे, पुनरपि स्वामी दयानन्द को यह उपलब्धि शिक्षाशास्त्र के क्षेत्र में बहुत महत्त्वपूर्ण थी । उन्होंने उपलब्ध शिक्षासूत्रों को आर्यभाषा व्याख्या सहित सं० १९३६ के अन्त में वर्णोच्चारण शिक्षा के नाम प्रकाशित किया ।[3]

---

१. ज्येष्ठभ्रातृभिर्विहितो व्याकरणेऽनुजस्तत्र भवान् पिङ्गलाचार्य, तन्मतमनुभाव्य शिक्षां वक्तुं प्रतिजानीते—अथ शिक्षामिति ।

२. आपिशल शिक्षा का भी एक श्लोकात्मक पाठ है । उसका आरम्भ का वचन है—अथ शिक्षां प्रवक्ष्यामि मतमापिशलेर्मुनेः ।

इस श्लोकात्मिका शिक्षा के १९ श्लोक उपलब्ध हुए थे । इन्हें भी डा० रघुवीर जी ने आपिशल शिक्षासूत्रों के पश्चात् छापा था ।

३. इस विषय में जो अधिक जानना चाहें वे हमारे 'ऋषि दयानन्द के ग्रन्थों का इतिहास' ग्रन्थ में देखें ।

श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती को प्राप्त हुए शिक्षासूत्रों का दूसरा हस्तलेख चिरकाल तक विद्वानों को उपलब्ध नहीं हुआ। इस कारण स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित शिक्षासूत्रों के पाणिनीयत्व में विद्वानों को शङ्का बनी ही रही। दैव योग से श्री डा० रघुवीरजी को अडियार (मद्रास) के पुस्तकालय से आपिशल शिक्षासूत्रों के दो हस्तलेख उपलब्ध हो गए। उन्होंने उनके साथ स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित शिक्षासूत्रों की तुलना करके स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित शिक्षासूत्रों के पाणिनीयत्व की स्थापना की। इस विषय में उन्होंने कुछ लेख लिखे।

इसके पश्चात् सन् १९३८ में कलकत्ता विश्वविद्यालय से मनोमोहन घोष एम० ए० सम्पादित 'पाणिनीय शिक्षा' नाम का एक ग्रन्थ प्रकाशित हुआ। इसकी बृहद् भूमिका में मनोमोहन घोष ने सारा प्रयत्न इस बात की सिद्धि के लिए लगाया कि पाणिनीय शिक्षा का श्लोकात्मक पाठ ही पाणिनि द्वारा प्रोक्त है, स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित सूत्रपाठ पाणिनीय नहीं है। इस प्रसंग में आपने डा० रघुवीर के लेख की आलोचना के साथ साथ सूत्रात्मक पाठ को दयानन्द द्वारा कल्पित पाठ सिद्ध करने की भरपूर चेष्टा की।

मनोमोहन घोष के उक्त भूमिकास्थ लेख की विस्तृत आलोचना हमने **मूल पाणिनीय शिक्षा** इस शीर्षक से पटना की 'साहित्य' नाम्नी पत्रिका के सन् १९५९ अङ्क १ में प्रकाशित की। उसमें मनोमोहन घोष के सभी हेत्वाभासों का सप्रमाण निराकरण किया हैं और श्लोकात्मिका शिक्षा को पाणिनीय मानने पर अष्टाध्यायी के साथ जो विरोध होते हैं उनका उल्लेख करके सूत्रात्मक पाठ का पाणिनीयत्व सिद्ध किया है। जो पाठक इस विषय में रुचि रखते हैं, वे हमारा उक्त लेख पढ़ें।[1]

## आपिशल और पाणिनीय शिक्षा

पाणिनीय शिक्षा के सूत्र आपिशल शिक्षा के सूत्रों के साथ बहुत साम्य रखते हैं। अतः आपिशल शिक्षा सूत्रों की उपलब्धि पर यह विचार करना अत्यन्त आवश्यक हो गया कि स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित शिक्षा सूत्र पाणिनीय हैं अथवा आपिशल। दोनों के सूत्र पाठों की तुलना से इतना तो स्पष्ट है कि दोनों का पाठ प्रायः समान है, परन्तु जहां

१. यह लेख शीघ्र प्रकाशित होने वाले 'मीमांसक-लेखावली' के द्वितीय भाग में छपेगा।

परस्पर में वैषम्य है वह प्रवक्तृ भेद के कारण है अथवा पाठान्तरमूलक है। यद्यपि कुछ वैषम्य पाठान्तर मूलक कहे जा सकते हैं, पुनरपि कुछ पाठ ऐसे अवश्य हैं जो प्रवक्तृभेद के कारण ही हैं। यथा—

| आपिशल पाठ | पाणिनीय पाठ |
| --- | --- |
| ईषद्विवृतकरणा ऊष्माणः। | ईषद्विवृतकरणा ऊष्माणः। |
| विवृतकरणाः स्वरा। | विवृतकरणा वा। |
| | विवृतकरणाः स्वरा। |

पाणिनीय पाठ में ऊष्म वर्णों का पक्षान्तर में विवृतकरण प्रयत्न कहा है, वह आपिशल पाठ में नहीं हैं। पाणिनीय अष्टाध्यायी में एक सूत्र है नाज्झलौ (१।१।१०)। इस सूत्र द्वारा पूर्व तुल्यास्यप्रयत्नं सवर्णम् (१।१।६) सूत्र से प्राप्त अचों और हलों की (अ इ ऋ लृ की क्रमशः ह श ष स के साथ) सवर्ण संज्ञा का निषेध किया है। उक्त हलों और अचों की सवर्ण संज्ञा तभी हो सकती है जब स्वरों के और ऊष्मों के आभ्यन्तर प्रयत्न समान हों। दोनों के आभ्यन्तर प्रयत्न की समानता विवृतकरणा वा इस पाणिनीय सूत्र से ही सिद्ध है। आपिशल शिक्षा में उक्त सूत्र न होने से अज्झलों की सवर्ण संज्ञा ही प्राप्त नहीं होती।

इसके अतिरिक्त दोनों शिक्षा सूत्रों के निम्न पाठ भी द्रष्टव्य हैं—

| आपिशल पाठ | पाणिनीय पाठ |
| --- | --- |
| ञमङणनाः स्वस्थाना नासिकास्थानाः (१।१६) | ङञणनमाः स्वस्थान-नासिकास्थानाः (१।२१) |
| स्पर्शयमवर्णकारो ······(५।१) | स्पर्शवर्णकरो······। |
| अन्तस्थवर्णकारो······(५।२ | अन्तस्थवर्णकरो······ |
| ऊष्मस्वरवर्णकारो······(५।३) | ऊष्मस्वरवर्णकरो···। |

इनमें से प्रथम उद्धरण में 'ञमङणनाः' निर्देश उणादि ञमन्ताड्डः (१।११४) सूत्र में प्रयुक्त ञम् प्रत्याहार के अनुरूप ञमङणनम् प्रत्याहार सूत्रानुसारी है। हमने अपने 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र के इतिहास' में सप्रमाण दर्शाया है कि पञ्चपादी उणादि आपिशलि प्रोक्त है और उसमें प्रयुक्त 'ञम्' प्रत्याहार की दृष्टि से प्रत्याहार सूत्र में निर्दिष्ट ञमङणन क्रम आपिशलि द्वारा उपज्ञात है और यही क्रम उसके शिक्षासूत्र में भी है। पाणिनीय सूत्र में वर्गक्रम से पाठ है।

अगले उद्धरणों में कार और कर का भेद है।[1] पाणिनीय कर पाठ पाणिनि के कृञो हेतुताच्छील्यानुलोम्येषु (३।२।२०) सूत्र के अनुसार है और कार पाठ में औत्सर्गिक अण् की कल्पना करनी पड़ती है।

इन भेदों के अतिरिक्त पाणिनीय शिक्षा में आपिशल शिक्षा की अपेक्षा निम्न सूत्र अधिक हैं—

कण्ठ्यान् आस्यमात्रान् इत्येके।१।७॥
दन्तमूलस्तु तवर्गः।१।११॥
विवृतकरणा वा।३।८॥

तीन सूत्रों का आधिक्य श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित लघुपाठ से दर्शाया है। हम पूर्व कह चुके हैं कि उक्त हस्तलेख में मध्य-मध्य में लेखक प्रमाद से कुछ सूत्र नष्ट हुए हैं। इनके अतिरिक्त सप्तम प्रकरण में चार सूत्र ऐसे हैं जो आपिशलीय शिक्षा में नहीं है (हमारे द्वारा प्रकाशित वृद्ध पाठ में भी नहीं हैं)। वृद्धपाठ में तो उक्त तीन सूत्रों के अतिरिक्त ७-८ सूत्र और ऐसे हैं जो आपिशल शिक्षा में नहीं हैं।

इस संक्षिप्त विवेचना से स्पष्ट है कि स्वामी दयानन्द द्वारा प्रकाशित शिक्षा सूत्र पाणिनीय ही हैं।

अब हम एक ऐसा प्रमाण भी उपस्थित करते हैं जिससे स्पष्ट हो जाएगा कि ये सूत्र प्राचीन ग्रन्थकारों द्वारा पाणिनि के नाम से स्मृत भी हैं। तैत्तिरीय प्रातिशाख्य के 'त्रिरत्न-भाष्य' नामक व्याख्या का रचयिता सोमयार्य लिखता है—सन्ध्यक्षराणां ह्रस्वा न सन्ति इति पाणिनीयेऽपि। मैसूर संस्क० पृष्ठ ४५०।

इस प्रमाण की उपस्थिति में पाणिनीय शिक्षा सूत्रों के सम्बन्ध में कोई विवाद उठ ही नहीं सकता। अब हम उसके वृद्धपाठ के विषय में लिखते हैं—

**पाणिनीय शिक्षासूत्र का वृद्धपाठ**—पाणिनीय शिक्षा सूत्रों का जो वृद्ध पाठ हम इस संस्करण में प्रकाशित कर रहे हैं, उसकी उपलब्धि की कथा भी विचित्र है। वह इस प्रकार है—

सन् १९३९ में 'दि इण्डियन रिसर्च इन्स्टीट्यूट' कलकत्ता से आपिशली शिक्षा के नाम से एक शिक्षा प्रकाशित हुई। पुस्तक के मुख पृष्ठ पर

---

१. पाणिनि के शिक्षासूत्र के वृद्ध पाठ में 'कार' पाठ मिलता है।

'अध्यापक अमूल्यचरण विद्याभूषण कर्तृक सम्पादित और अनूदित' शब्द छपे हुए हैं। इस में बंगला अनुवाद तो अवश्य है परन्तु सम्पादन के नाम पर किया जाने वाला कोई भी प्रयत्न इसमें नहीं है। हां, तीन स्थानों पर (?) इस प्रकार कोष्ठक में प्रश्न चिह्न अवश्य उपलब्ध होते हैं। अस्तु हमारे लिए तो यह प्रयत्नाभाव भी वरदान रूप सिद्ध हुआ। उक्त ग्रन्थ को देखने से विदित होता है कि मुद्रित ग्रन्थ उपलब्ध हस्तलेख की अक्षरशः प्रतिलिपि मात्र है और वह लेखक प्रमाद से बहुत भ्रष्ट हो गया है, पाठ स्थान-स्थान पर खण्डित और आगे पीछे हो रहा हैं।

हमारी दृष्टि में यह ग्रन्थ सन् १९५३ में आया। इस पर 'आपिशली शिक्षा' नाम छपा होने से चिरकाल तक हमने इस पर ध्यान नहीं दिया। एक दिन विचार उत्पन्न हुआ कि इसको आपिशल शिक्षा सूत्र से मिलाया जाय। तब हमने सन् १९४९ में स्वयं मुद्रापित आपिशल शिक्षासूत्रों से मिलान करना आरम्भ किया। उस तुलना में ङञणनमा नासिकास्थानाः पाठ ने हमारा ध्यान विशेष रूप से आकृष्ट किया, क्योंकि यह वर्णानुक्रम पाणिनीय शिक्षा सूत्र में है। आपिशलशिक्षा में ञमङणनाः पाठ है। इसके पश्चात् तृतीय प्रकरण के विवृतकरणा वा सूत्र ने यह बोध कराया कि सम्भव है यह शिक्षा पाणिनीय शिक्षा ही हो, आपिशल शिक्षा न हो। इस दृष्टि से सम्पूर्ण सूत्रों की तुलना स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित शिक्षासूत्रों के साथ की, तब यह निश्चय हो गया कि जहां-जहां भी अमूल्य-चरण विद्याभूषण द्वारा प्रकाशित शिक्षा का पाठ आपिशल शिक्षा से भिन्न है वहां वह सर्वत्र स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित शिक्षासूत्रों से मिलता है। इस तुलना से इतना निश्चय हो गया कि यह पाठ पाणिनीय शिक्षा का ही है, आपिशल शिक्षा का नहीं।

इस पर विचार उत्पन्न हुआ कि श्री अमूल्यचरण जी ने इस ग्रन्थ के ऊपर आपिशली शिक्षा शीर्षक किस आधार पर छापा। इसके लिए हमने उनकी भूमिका पढ़ी। उसमें उन्होंने इस हस्तलेख के सम्बन्ध में कहीं पर भी नहीं लिखा कि कोश के आदि वा अन्त में 'आपिशली शिक्षा' नाम का उल्लेख है। प्रतीत होता है अमूल्यचरण जी अष्टम प्रकरण के—

**स एवमापिशलेः पञ्चदशभेदाख्या वर्णधर्मा भवन्ति ॥८॥**

सूत्र में आपिशलि नाम देखकर ही ग्रन्थ के आद्यन्त में आपिशली शिक्षा का नाम जोड़ दिया।

अमूल्यचरण जी द्वारा प्रकाशित पाठ अत्यन्त भ्रष्ट है[1]। केवल उसी के आधार पर उस ग्रन्थ का सम्पादन कठिन है। सम्भवतः इसी कारण अमूल्यचरण जी ने हस्तलेख के अनुरूप ही उसे यथातथरूप में छाप दिया। इससे यह भो प्रतीत होता है कि उन्हें डा० रघुवीर जी द्वारा प्रकाशित आपिशल शिक्षा और स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित पाणिनीय शिक्षा का ज्ञान नहीं था, अन्यथा वे उनकी सहायता से ग्रन्थ का सम्पादन कर सकते थे।

हमने उक्त दोनों शिक्षा सूत्रों के आधार पर तथा विविध ग्रन्थों में उद्धृत सूत्रों के साहाय्य से इस अमूल्य निधि का सम्पादन किया है। जब इस ग्रन्थ के पाठ का सम्पादन कर लिया, तब इस पाठ और स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा प्रकाशित पाठ की तुलना से विदित हुआ कि हमारे द्वारा सम्पादित शिक्षा पाठ वृद्धपाठ है और स्वामी दयानन्द द्वारा प्रकाशित पाठ लघुपाठ है। अनेक प्राचीन ग्रन्थों के वृद्ध और लघु पाठ उपलब्ध होते हैं। पाणिनि के सूत्रपाठ धातुपाठ गणपाठ उणादिपाठ सभी के लघु और वृद्ध पाठ हैं।[1] इसी प्रकार उसकी सूत्रात्मिका शिक्षा के भी वृद्ध और लघु पाठ हों तो आश्चर्य ही क्या है। प्राचीन परम्परा के अनुसार वृद्ध और लघु दोनों प्रकार के पाठ एक ही आचार्य द्वारा विभिन्न प्रकार से प्रवचन[2] के कारण उत्पन्न हुए हैं।

अब हम पाणिनीय शिक्षा के दोनों पाठों की कुछ तुलना उपस्थित करते हैं—

| लघु पाठ | वृद्ध पाठ |
|---|---|
| [वर्णास्] त्रिषष्टिः | स्थानकरणप्रयत्नेभ्यो वर्णास्त्रिषष्टिः ।४। |
| | चतुःषष्टिरित्येके ।५। |
| | [इति] संयुक्ता वर्णाः ।१।२४। |
| आभ्यन्तरस्तावत् | स्वस्थान आभ्यन्तरस्तावत् ।३।४।। |
| | तेभ्य ए ओ विवृततरौ ।३।६।। |

१. इन पाठों के विषय मे हमारे 'संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास' के तत्तत् प्रकरण देखिए।

२. प्राचीन आचार्य शास्त्रीय ग्रन्थ लिखा नहीं करते थे, अपितु पढ़ाया करते थे, अतः वे प्रोक्त कहाते थे।

| लघु पाठ | वृद्ध पाठ |
| --- | --- |
| | ताभ्यामै औ ।३।१०।। |
| | ताभ्यामाकारः ।।३।११।। |
| | कादयो मावसानाः स्पर्शाः ।४।८।। |
| | यादयोऽन्तस्थाः ।४।६ । |
| अवर्णो ह्रस्वदीर्घप्लुतत्वाच्च त्रैस्वर्योपनयेन चानुनासिक्य-भेदाच्च संख्यातोऽष्टादशा-त्मकः । | एवं व्याख्याने वृत्तिकाराः पठन्ति—अष्टा-दशप्रभेदमवर्णकुलमिति । तत्कथमुक्तम्— ह्रस्वदीर्घप्लुतत्वाच्च त्रैस्वर्योपनयेन च । आनुनासिक्यभेदाच्च संख्यातोऽष्टादशात्मकः ।६।१२।। |
| | उत्साहः प्रयत्नः ।७।६।। |
| | स्पृष्टतादिर्वर्णगुणः ।७।७।। |

इन उद्धरणों के विपरीत लघुपाठ में ऐसे पाठ भी हैं, जो वृद्धपाठ में लघुरूप में हैं अथवा नहीं हैं । यथा—

| लघु पाठ | वृद्ध पाठ |
| --- | --- |
| द्वे द्वे वर्णे सन्ध्यक्षराणा-मारम्भके भवत इति । | द्विवर्णानि सन्ध्यक्षराणि । |

सप्तम प्रकरण के निम्न २-५ सूत्र वृद्धपाठ में नहीं हैं—

तत्रैते कौशिकीयाः श्लोकाः—
सर्वान्तेऽयोगवाहत्वाद् विसर्गादिरिहाष्टकः ।
अकार उच्चारणार्थो व्यञ्जनेष्वनुबध्यते ।।
⌣क⌣ पयोः कपकारौ च तद्वर्गीयाश्रयत्वतः ।
पलक्क्नी चख्खनतुर्जग्मिर्जग्घ्नुरित्यत्र यद् वपुः ।।
नासिक्येनोक्तं कादीनां त इमेऽयमाः । तेषामनुकारः संस्थानवर्गीयलक्षकः ।।

लघु पाठ में यह सर्वत्र आवश्यक नहीं कि उस पाठ में वृद्धपाठ की अपेक्षा लघुत्व ही हो । समूहावलम्बन से लघुत्व और वृद्धत्व देखा जाता है । लघुपाठ के सप्तम प्रकरण के जो सूत्र उद्धृत किए हैं, उन में यह भी सम्भावना हो सकती है कि लघुपाठ के किसी हस्तलेख में ये श्लोक किसी पाठक ने ग्रन्थान्तर से ग्रन्थ के प्रान्त (हाशिये) पर लिखे हों और उत्तर काल के प्रतिलिपिकर्ता ने उन्हें छटा हुआ पाठ मानकर मूल में सन्निविष्ट कर दिया हो ।

यतः जब तक लघु पाठ का अन्य हस्तलेख उपलब्ध न हो जाए, कुछ समस्याएं बनी ही रहेंगी।

## चान्द्र–शिक्षा

आचार्य चन्द्रगोमी एक प्रसिद्ध प्राचीन बौद्ध वैयाकरण थे। इन्होंने कश्मीर के महाराज अभिमन्यु के आदेश से नष्टप्राय: महाभाष्य का उद्धार किया था। यह वृत्तान्त कल्हण की राजतरङ्गिणी और भर्तृहरिकृत वाक्य-पदीय में भले प्रकार लिखा है।

चन्द्रगोमी ने पाणिनीय अष्टाध्यायी और महाभाष्य के आधार पर अपने व्याकरण की रचना की है। सम्प्रति उसके व्याकरण के छः अध्याय मिलते हैं। शेष दो अध्याय जिनमें स्वर और वैदिक प्रकरण था, लुप्त हैं। इन लुप्त अध्यायों के अनेक प्रमाण और सूत्र उसके वृत्ति ग्रन्थ में उपलब्ध होते हैं।

आचार्य चन्द्रगोमी के समय और उसके व्याकरण के विषय में हमने अपने "संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास" नामक ग्रन्थ में विस्तार से लिखा है।

आचार्य चन्द्रगोमी ने जैसे पाणिनीय व्याकरण के आधार पर अपने व्याकरण की रचना की, उसी प्रकार पाणिनीय शिक्षासूत्रों के आधार पर उसने अपने वर्णसूत्र लिखे थे। ये वर्णसूत्र जर्मन के छपे चान्द्र व्याकरण के अन्त में रोमन अक्षरों में मुद्रित हैं।

चान्द्र शिक्षा का पाठ मनोमोहन घोष ने स्वसम्पादित पाणिनीय शिक्षा के अन्त में भी छापा है। वह जर्मन मुद्रित पाठ की अपेक्षा अशुद्ध है। पुनरपि हमने उससे कुछ पाठान्तर संगृहीत कर दिए हैं।

शिक्षा-शास्त्र के विषय में विस्तृत विवेचना हम शिक्षा-शास्त्र के इतिहास में करेंगे।

भारतीय प्राच्यविद्या-प्रतिष्ठान, अजमेर<br>
मार्गशीर्ष कृ० ३० सं० २०२३

युधिष्ठिर मीमांसक

———

# विषय-सूची


| विषय | पृष्ठ |
|---|---|
| भूमिका | १ |
| आपिशल-शिक्षा | २ |
| पाणिनीय-शिक्षा | ५ |
| आपिशल-शिक्षा और पाणिनीय शिक्षा | ७ |
| पाणिनीय-शिक्षा का वृद्ध-पाठ | ९ |
| लघु-पाठ और वृद्ध-पाठ की तुलना | ११ |
| चान्द्र-शिक्षा | |

**शिक्षा-सूत्राणि**

| | |
|---|---|
| आपिशल-शिक्षा | १ |
| पाणिनीय-शिक्षा [वृद्ध-पाठ] | ९ |
| पाणिनीय-शिक्षा [लघु-पाठ] | १९ |
| चान्द्र-वर्णसूत्राणि | २४ |

# अथ आपिशलशिक्षा

१. आकाशवायुप्रभवः शरीरात्
समुच्चरन् वक्त्रमुपैति नादः।
स्थानान्तरेषु प्रविभज्यमानो
वर्णत्वमागच्छति यः स शब्दः।
२. तमक्षरं ब्रह्म परं पवित्रं
गुहाशयं सम्यगुशन्ति विप्राः।
स श्रेयसा चाभ्युदयेन चैव
सम्यक् प्रयुक्तः पुरुषं युनक्ति।
३. स्थानमिदं, करणमिदं,
प्रयत्न एष द्विधाऽनिलः
स्थानं पीडयति, वृत्तिकारः
प्र[1] क्रम एषो, ऽथ नाभितलात् ॥
४. तत्र स्थानकरणप्रत्नेभ्यो वर्णास्त्रिषष्टिः।
५. तत्र वर्णानां केषां किं स्थानं किं करणं प्रयत्नश्च कः केषामित्युच्यते।

## १—स्थानप्रकरणम्

१. तत्र स्थानं तावत्।
२. अकुहविसर्जनीयाः कण्ठ्याः।[2]

---

१. सप्तमप्रकरणस्य प्रथमसूत्रे 'क्रम' शब्द एव न तु प्रक्रमः। तस्य 'पीडयति' क्रियया सम्बन्धः। छन्दोवत्सूत्राणि भवन्तीति नियमात् क्रियायाः परो व्यवहितश्चेह प्रयुक्तः।

२. आपिशलशिक्षाया, पाणिनीयशिक्षायाश्च सूत्राणि प्रायेण सदृशानि। तत्र न्यासपदमञ्जर्योः काशिकायां च यानि शिक्षासूत्राण्युद्धृतानि तानि पाणिनीयानीति कृत्वा तदुद्धरणस्थानानि पाणिनीयशिक्षासूत्रेष्वेव प्रदर्शयिष्यन्ते। इह येन साक्षाद् आपिशलिनाम्ना सूत्राण्युद्धृतानि तेषामेव निर्देशः करिष्यते।

३. हविसर्जनीयावुरस्यावेकेषाम् ।
४. जिह्वामूलीयो जिह्व्यः ।
५. कवर्गावर्णानुस्वारजिह्वामूलीया जिह्व्या एकेषाम् ।
६. सर्वमुखस्थानमवर्णमेके ।
७. इचुयशास्तालव्याः ।
८. ऋटुरषा मूर्धन्याः ।
९. रो दन्तमूलस्थानमेकेषाम् ।
१०. लृतुलसा दन्त्याः ।
११. वकारो दन्तोष्ठ्यः ।
१२. सृक्वस्थानमेके ।
१३. उपूपध्मानीया ओष्ठ्याः ।
१४. अनुस्वारयमा नासिक्याः ।
१५. कण्ठनासिक्यमनुस्वारमेके ।
१६. यमाश्च नासिक्यजिह्वामूलीया एकेषाम् ।
१७. एदैतो कण्ठतालव्यौ ।
१८. ओदौतौ कण्ठोष्ठ्यौ ।
१९. ञमङणनाः स्वस्थाना नासिकास्थानाश्च ।
२०. द्विवर्णानि सन्ध्यक्षराणि ।
२१. सरेफ ऋवर्णः ।[1]
२२. एवमेतानि स्थानानि ।

## २—करणप्रकरणम्

१. करणमपि ।
२. जिह्व्यतालव्यमूर्धन्यमन्त्यानां जिह्वाकरणम् ।[2]

---

१. इतोऽग्रे 'सलकार लृवर्णः' इति सूत्रमपेक्षते । चतुरध्यायिकानाम्न्याथर्वणपरिशिष्टे 'सलकारं लृवर्णम्' (१।३९) इति सूत्रं पठ्यते ।

२. इत आरभ्य नवमसूत्रान्तानि अष्टौ सूत्राणि हैमबृहन्न्यासे (१।१।१७, पृष्ठ २४) नामनिर्देशं विनोद्धृतानि । तत्रैव (१।१।१७) बृहद्वृत्तौ हेमचन्द्राचार्य आपिशलिनामनिर्देशपुरःसरम् अष्टमप्रकरणस्य सूत्राण्युद्धृतवान्, अत इमान्यप्यापिशलान्येवेति विज्ञायते ।

३. कथमिति ?
४. जिह्वामूलेन जिह्व्यानाम् ।
५. जिह्वामध्येन तालव्यानाम् ।
६. जिह्वोपाग्रेण मूर्धन्यानाम् ।
७. जिह्वाग्राधः करणं वा ।
८. जिह्वाग्रेण दन्त्यानाम् ।
९. शेषाः स्वस्थानकरणाः ।[1]
१०. इत्येतत् करणम् ।

## ३—अन्तःप्रयत्नप्रकरणम्

१. प्रयत्नो द्विविधः ।
२. आभ्यन्तरो बाह्यश्च ।
३. आभ्यान्तरस्तावत् ।
४. स्पृष्टकरणाः स्पर्शाः ।
५. ईषत्स्पृष्टकरणा अन्तस्थाः ।
६. ईषद्विवृतकरणाः ऊष्माणः ।
७. विवृतकरणाः स्वराः ।[2]
८. तेभ्य ए ओ विवृततरौ ।
९. ताभ्यामं औ ।
१० [ताभ्यामप्याकारः ।][3]
११. संवृतोऽकारः ।
१२. इत्येषोऽन्तःप्रयत्नः ।

---

१. 'शेषाः [स्व]स्थानकरणाः' इत्यापिशलिशिक्षावचनात् । तै० प्राति० २।४६, वैदिकाभरण-टीका, पृष्ठ ९० ।

२. इत आरभ्य 'संवृतोऽकारः' इत्यन्तानि पञ्च सूत्राणि शब्दभाष्यनाम्नि ग्रन्थ उद्ध्रियन्ते (द्र० पत्र ३ ख)। अत्राह ग्रन्थकारः—'विवृत·········ऽकारः' इति शिक्षावाक्यात् । पञ्चमपत्रस्य कपृष्ठे त्वाह–'प्रागुक्तं तु मतान्तरं, न पाणिनीयम्' । तेनानुमीयते शब्दभाष्यकार आपिशलीयान्येव सूत्राण्युद्धारेति ।

३. सूत्रमेतदत्र त्रुटितं स्यात् शब्दभाष्ये पाणिनीयपाठे च दर्शनात् ।

## ४—बाह्यप्रयत्नप्रकरणम्

१. अथ बाह्यः ।
२. वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसविसर्जनीयजिह्वामूलीयोपध्मानीयां यमौ च प्रथमद्वितीयौ विवृतकण्ठाः श्वासानुप्रदाना अघोषाः ।
३. वर्गयमानां प्रथमे अल्पप्राणा इतरे सर्वे महाप्राणाः ।
४. वर्गाणां तृतीयचतुर्था अन्तस्था हकारानुस्वारौ यमौ च तृतीयचतुर्थौ संवृतकण्ठा नादानुप्रदाना घोषवन्तः ।
५. वर्गयमानं तृतीया अन्तस्थाश्चल्पप्राणा इतरे सर्वे महाप्राणाः ।
३. यथातृतीयास्तथा पञ्चमाः ।
७. आनुनासिक्यमेषामधिको गुणः ।
८. शादय उष्माणः ।[1]
९. सस्थानेन द्वितीयाः ।
१०. हकारेण चतुर्थाः ।
११. एष बाह्यः प्रयत्नः ।

## ५—स्थानपीडनप्रकरणम्

१. तत्र स्पर्शयमवर्णकारो[2] वायुरयःपिण्डवत् स्थानमभिपीडयति ।
२. अन्तस्थवर्णकारो[2] वायुर्दारुपिण्डवत् ।
३. ऊष्मस्वरवर्णकारो[2] वायुरूर्णापिण्डवत् ।

---

१. इतः पूर्वं पाणिनीयशिक्षाया वृद्धपाठे 'कादयो मावसानाः स्पर्शाः, यादयोऽन्तस्थाः' इति द्वे सूत्रे दृश्येते । ते अत्र त्रुटिते इति ज्ञायते, अन्यथा 'शादय उष्माणः' इत्यप्रासङ्गिकः स्यात् ।

२. '०वर्णकरो वायु०' पाठ आपिशलशिक्षाया इति हैमबृहन्न्यासे तैत्तिरीयप्रातिशाख्यस्य चवैदिकाभरणटीकायामुद्धृतः पाठः प्रतीयते । हैमबृहन्न्यासे (१।१।१७, पृ० २४) नामनिर्देशं विना अस्य प्रकरणस्य त्रीण्यपि सूत्राण्युद्ध्रियन्ते । वैदिकाभरणटीकाकृत्तु 'तदुक्तमापशलशिक्षायाम्' इत्येवं निर्दिश्य त्रीण्यपि सूत्राण्युद्धृतवान् (तै० प्रा० २३।२) । उभयत्रापि प्रथमसूत्रे 'तत्र' पदं च नास्ति ।

## ६—वृत्तिकारप्रकरणम्

१. एवं व्याख्याने वृत्तिकाराः पठन्ति—अष्टादशप्रभेदमवर्णकुलमिति। अत्र[1]—

२. ह्रस्वदीर्घप्लुतत्वाच्च त्रैस्वर्योपनयेन च।
आनुनासिक्यभेदाच्च संख्यातोऽष्टादशात्मकः॥ इति[2]॥

३. एवमिवर्णादयः।

४. लृवर्णस्य दीर्घा न सन्ति।

५. तं द्वादशप्रभेदमाचक्षते।

६. यदृच्छाशक्तिजानुकरणा वा यदा दीर्घा स्युस्तदा तमप्यष्टादशप्रभेदं ब्रुवते।

७. सन्ध्यक्षराणां ह्रस्वा न सन्ति।

८. तान्यपि द्वादशप्रभेदानि।

९. छन्दोगानां सात्यमुग्रिराणायनीया(नां?) ह्रस्वानि पठन्ति।

१०. तेषामप्यष्टादशप्रभेदानि।

११. अन्तस्था द्विप्रभेदा रेफवर्जिताः सानुनासिका निरनुनासिकाश्च।

१२. रेफोष्मणां सवर्णा न सन्ति।

१३. वर्ग्यो वर्ग्येण सवर्णः।

## ७—प्रक्रमप्रकरणम्

१. एष क्रमो वर्णानाम्।

२. तत्रैषा स्थानकरणप्रयत्नानां व्याकरणप्रसिद्धिरुच्यते।

३. इह यत्र स्थाने वर्णा उपलभ्यन्ते तत् स्थानम्।

४. येन निर्वर्त्यन्ते तत् करणम्।

५. प्रयतनं प्रयत्नः।

---

१. 'तत् कथम्' इति पाठान्तरम्।

२. श्लोकोऽयं कस्याश्चित् प्राचीनशिक्षात उद्धृत इतीतिकरणात् प्रतीयते।

## ८—नाभितलप्रकरणम्

१. 'तत्र'[2] नाभिप्रदेशात् प्रयत्नप्रेरितः प्राणो नाम वायुरुर्ध्वमाक्रामन्नुरःप्रभृतीनां स्थानानामन्यतमस्मिन् स्थाने प्रयत्नेन विधार्यते। स विधार्यमाणो वायुः स्थान[3]मभिहन्ति। तस्मात् स्थानाभिघाताद् ध्वनिरुत्पद्यत आकाशे, सा वर्णश्रुतिः। स वर्णस्यात्मलाभः।

२. तत्र ध्वना[4]वुत्पद्यमाने यद स्थानकरणप्रयत्नाः परस्परं स्पृशन्ति सा स्पृष्टता।

३. यदेषत् स्पृशन्ति तदेषत्[5]स्पृष्टता।

४. दूरेण यदा[6] स्पृशन्ति स विवृतता॥[7]

५. सामीप्येन यदा स्पृशन्ति[8] सा संवृतता।

६. इत्येषोऽन्तः प्रयत्नः।[9]

७. स इदानीं[10] प्राणो नाम वायुरुर्ध्वमाक्रामन् मूर्ध्नि प्रतिहतो निवृत्तो यदा कोष्ठ[11]मभिहन्ति तदा कोष्ठे[12]ऽभिहन्यमाने गलबिलस्य[13] विवृतत्वाद्

---

१. 'तथा चापिशलिः शिक्षामधीते—नाभिप्रदेशात्……' इत्युक्त्वा त्र्योविंशतिसूत्राणि हैमबृहद्वृत्तौ (१।१।१७) उद्धृतानि॥ 'तद्यथा—नाभिप्रदेशात् प्रयत्नप्रेरितो वायुरूर्ध्वमाक्रामन्नुरस्यादीनां स्थानानामन्यतमं स्थानमभिहन्ति, ततः शब्दनिष्पत्तिः' इत्यादिशिक्षाकार……' भर्तृहरिर्वाक्यपदीयस्य स्वोपज्ञवृत्तौ (काण्ड १, पृष्ठ १०४ लवपुरसंस्करणम्)। अत्र 'तद्यथा' स्थाने 'तथा' पाठोऽपेक्षते। 'तथेत्यापिशलिशिक्षादर्शनम्' इति स्वोपज्ञवृत्तेष्टीकायां वृषभदेव आह। पृ० १०५ लवपुरसंस्करणम्।

२. 'तत्र' नास्ति, हैम०, शभा च।

३. विधार्यमाण, स्थानहैं—हैम० शभा च।

४. तत्र वर्णध्वना०—हैम० शभा च।

५. स्पृशन्ति सा ईषत्—हैम० शभा च।

६. 'यदा दूरेण' शभा।

७. चतुर्थपञ्चमसूत्रयोः वैपरीत्येन हैमवृत्तौ शब्दभाष्ये च पाठ उपलभ्यते।

८. यदा सामीप्येन स्पृशन्ति—हैम० शभा च।

९. 'इति नास्ति शभा। सूत्रं नास्ति—हैम०।

१०. स इदानीं बाह्यः प्रयत्नः। यदा—इति शभा।

११. निवृत्तः कोष्ठ—हैम० शभा च।

१२. ०हन्ति तत्र कोष्ठे—हैम० शभा च।

१३. कण्ठबिलस्य—हैम० शभा च।

विवारः, संवृतत्वात् संवारो जायते[१]।

८. तौ संवारविवारौ ।

९. तत्र यदा कण्ठबिलं[२] संवृतं भवति तदा नादो जायते ।

१० विवृते कण्ठबिले श्वासो जायते[२]।

११. तौ श्वासनादावनुप्रदानमित्याचक्षते[३]।

१२. अन्ये तु ब्रुवते—अनुप्रदानमनुस्वानो घण्टानिर्ह्लादवत्[४]।

१३. तत्र यदा स्थानाभिघातजे[५] ध्वनौ नादोऽनुप्रदीयते तदा नादध्वनिसंसर्गाद् घोषो जायते ।

१४. यदा[६] श्वासोऽनुप्रदीयते तदा श्वासध्वनिसंसर्गाद् अघोषः[७]।

१५. सा घोषवदघोषता ।[८]

१६. महति वायौ महाप्राणः ।[९]

१७. अल्पे वायावल्पप्राणः[१०]।

१८. साल्पप्राणमहाप्राणता ।[११]

१९. महाप्राणत्वादूष्मत्वम् ।

२०. यदा सर्वाङ्गानुसारी[१२] प्रयत्नस्तीव्रो भवति, तदा गात्रस्य निग्रहः, कण्ठबिलस्य चाणुत्वं[१३] स्वरस्य च[१४] वायोस्तीव्रगतित्वाद् रौक्ष्यं भवति—तमुदात्तमाचक्षते ।

---

१. 'जायते' नास्ति, हैम० शभा च ।

२. तत्र यदा कण्ठबिलं विवृतं भवति तदा श्वासो जायते, संवृते तु नादः—हैम० शभा च ।

३. 'तावनुप्रदानमाचक्षते'—हैम० 'तावनुप्रदानमाचक्षते केचित्' शभा च ।

४. घण्टाह्लादवत्—हैम०, घण्टादिनिह्लादवत्—शभा ।

५. स्थानकरणाभिघातजे—हैम०, स्थानकण्ठाभिघातजे—शभा ।

६. यदा तु श्वासो—शभा ।

७. घोषो जायते— हैम० शभा० च ।

८. सूत्रं नास्ति—हैम० शभा च ।

९. महाप्राणता जायते—हैम० । तदुक्तं शिक्षायाम्—महति वायौ महाप्राणाः, अल्पे वायावल्पप्राणाः । वैदिकाभरणटीका, तै० प्राति० ३।११, पृ० ७२, शभा च ।

१०. अल्पप्राणता—हैम० शभा च । षोडशसप्तदशयोः सूत्रयोर्वैपरीत्येन पाठः—हैम० शभा च ।

११. सूत्रं नास्ति—हैम० शभा च । १२. सर्वगात्रानुसारी—शभा ।

१३. कण्ठबिलस्याणुत्वं—शभा । १४. स्वरस्य वायोश्च तीव्र०—शभा ।

२१. यदा तु मन्दः प्रयत्नो भवति तदा गात्रस्य स्रंसनं, कण्ठबिलस्य[1] महत्त्वं स्वरस्य च[2] वायोर्मन्दगतित्वात् स्निग्धता भवति तमनुदात्तमाचक्षते ।

२२. उदात्तानुदात्तस्वरसन्निपातात् स्वरित इति ।[3]

२३. एवं प्रयत्नोऽभिनिर्वृत्तः कृत्स्नः प्रयत्नो भवति ।[4]

२४. अष्टौ स्थानानि वर्णानामुरः कण्ठः शिरस्तथा ।
जिह्वामूलं च दन्ताश्च नासिकोष्ठौ च तालु च ॥[5]

२५. स्पृष्टत्वमीषत्स्पृष्टत्वं संवृतत्वं तथैव च ।
विवृतत्वं च वर्णानामन्तःकरणमुच्यते ॥

२६. कालो विवारसंवारौ श्वासनादावघोषता ।
घोषोऽल्पप्राणता चैव महाप्राणः स्वरास्त्रयः ॥

२७. बाह्यं करणमाहुस्तान् वर्णानां वर्णवेदिनः ।

॥ इत्यापिशलिशिक्षा-सूत्राणि समाप्तानि ॥

---

१. बिलस्य च: महत्त्वं—शभा । [२. स्वरस्य वायोश्च मन्द०—शभा ।
३. अग्रिमसूत्राणि नोद्धृतानि—शभा ।
४. एष कृत्स्नो बाह्यः प्रयत्नः—हैम० ।
५. 'यदाहुः' इत्युक्त्वोदाहृतः—हैम० ।

# अथ पाणिनीयशिक्षा

[ वृद्ध–पाठ[1] ]

१. आकाशवायुप्रभवः शरीरात्
समुच्चरन् वक्त्रमुपैति नादः।
स्थानान्तरेषु प्रविभज्यमानो
वर्णत्वमागच्छति यः स शब्दः।

२. तमक्षरं ब्रह्म परं पवित्रं
गुहाशयं सम्यगुशन्ति विप्राः।
स श्रेयसा चाभ्युदयेन चैव
सम्यक् प्रयुक्तः पुरुषं युनक्ति।

३. स्थानमिदं, करणमिदं,
प्रयत्न एष द्विधाऽनिलः
स्थानं पीडयति, वृत्तिकारः
प्र[1]क्रम एषो, ऽथ नाभितलात्॥

४. स्थानकरणप्रयत्नपरेभ्यो वर्णास्त्रिषष्टिः।

५. चतुःषष्टिरित्येके।[2]

६. तत्र वर्णानां केषां किं स्थानं किं करणं प्रयत्नश्च ते, द्विधा विजभते(?)

## १—स्थानप्रकरणम्

१. तत्र स्थानं तावत्।

---

१. पाणिनेः शिक्षासूत्राणामष्टाध्यायीवद् द्वौ पाठौ स्तः। एको लघुः, अपरो वृद्धः। तत्र लघुपाठोऽसम्पूर्ण एवोपलभ्यत इति कृत्वाऽग्रे मुद्रितः। अयं वृद्धपाठो यथा महता प्रयत्नेन पूरितस्तस्य वृत्तं भूमिकायां द्रष्टव्यम्।

२. तुलना कार्या—त्रिषष्टिश्चतुःषष्टिर्वा वर्णाः शम्भुमते स्थिताः (मताः) इत्यर्वाचीनायां पाणिनीयशिक्षानाम्ना प्रसिद्धायां शिक्षायाम्।

२. अकुहविसर्जनीयाः कण्ठ्याः ।[१]
३. हविसर्जनीयावुरस्यावेकेषाम् ।
४. जिह्वामूलीयो जिह्व्यः ।
५. कवर्गावर्णानुस्वारजिह्वामूलीया जिह्व्या एकेषाम् ।
६. सर्वमुखस्थानमवर्णमित्येके ।[२]
७ कण्ठ्यानास्यामात्रानित्येके ।
८. इचुयशास्तालव्याः ।[३]
९. ऋटुरषा मूर्धन्याः ।[४]
१०. रेफो दन्तमूलीय एकेषाम् ।
११. दन्तमूलस्तु तवर्गः ।
१२. लृतुलसा दन्त्याः ।[५]
१३. वकारो दन्तोष्ठ्यः ।
१४. सृक्किणीस्थानमेकेषाम् ।
१५. उपूपध्मानीया ओष्ठ्याः ।[६]
१६. अनुस्वारयमा नासिक्याः ।[७]
१७. कण्ठनासिक्यमनुस्वारमेके ॥
१८. यमाश्च नासिक्यजिह्वामूलीया एकेषाम् ।
१९. ए ऐ कण्ठोष्ठ्यौ ।[८]

---

१. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० सूत्र ५, पृष्ठ २२; १।१।९, पृ० ५८) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५८) च ।

२. तुलना कार्या—सर्वमुखस्थानमवर्णमेक इच्छन्ति । महाभाष्य १।१।९॥

३. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० सूत्र ५, पृष्ठ २२; १।१।९, पृ० ५८) पदमञ्जर्यां (१।१।९ पृष्ठ ५८) न्यायमञ्जर्यां (पृ० २०५) च ।

४. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० सू० ५ पृष्ठ २०, २१; १।१।९, पृ० ५८) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५८)च ।

५. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० ५, पृ० २२; १।१।९, पृ० ५८) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५८) च ।

६. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० ५, पृ० २२; १।१।९, पृ० ५८) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५८) च ।

७. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० ५, पृ० २५; १।१।९, पृ० ५९) ।

८. उद्धृतं न्यासे (१।१।९, पृ० ५८; १।१।४८, पृ० ९२) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५८) च ।

२०. ओ औ कण्ठोष्ठ्यौ ।[1]
२१. ङञणनमाः स्वस्थाना नासिकास्थानाः ।
२२. द्विवर्णानि सन्ध्यक्षराणि ।
२३. सरेफ ऋवर्णः ।[2]
२४. [इति] संयुक्ता वर्णाः ।
२५. एवमेतानि स्थानानि ।

## २—करणप्रकरणम्

१. करणमपि ।
२. जिह्व्यतालव्यमूर्धन्यदन्त्यानां जिह्वा करणम् ।
३. जिह्वामूलेन जिह्व्यानाम् ।
४. जिह्वामध्येन तालव्यानाम् ।
५. जिह्वोपाग्रेण मूर्धन्यानाम् ।
६. जिह्वाग्राधः करणं वा ।
७. जिह्वाग्रेण दन्त्यानाम् ।
८. शेषाः स्वस्थानकरणाः ।
९. इत्येतत् करणम् ।

## ३—अन्तःप्रयत्नप्रकरणम्

१. प्रयत्नो द्विविधः ।
२. आभ्यन्तरो बाह्यश्च ।
३. स्वस्थाने आभ्यान्तरस्तावत् ।
४. स्पृष्टकरणाः स्पर्शाः ।[3]

---

१. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० ५, पृ० २३; १।१।९, पृष्ठ ५८; १।१।४८, पृष्ठ ९२) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५८) च ।

२. द्र० येषां दर्शनमर्धमात्रा कालो रेफ ऋकारेऽस्तीति तन्मतेन……। येषामपि दर्शनं मात्राचतुर्थभागो रेफ ऋकार इति………। महाभाष्यप्रदीपे ८।४।१ कैयटः । अत्रापिशलशिक्षायामस्मिन् सूत्रे निर्दिष्टा टिप्पण्यपि द्रष्टव्या ।

३. उद्धृतं न्यासे (१।१।९,पृ० ५९) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५७) च ।

५. ईषत्स्पृष्टकरणा अन्तस्थाः ।[1]
६. ईषद्विवृतकरणाः ऊष्माणः ।
७. विवृतकरणा वा ।
८. विवृतकरणाः स्वराः ।[2]
९. तेभ्य ए ओ विवृततरौ ।[3]
१०. ताभ्यामं औ ।[4]
११. [ताभ्यामप्याकारः ।][5]
१२. संवृतस्त्वकारः ।[6]
१३. इत्येषोऽन्तःप्रयत्नः ।

## ४—बाह्यप्रयत्नप्रकरणम्

१. अथ बाह्यः ।
२. वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसविसर्जनीयजिह्वामूलीयोपध्मानीया यमौ च प्रथमद्वितीयौ विवृतकण्ठाः श्वासानुप्रदाना अघोषाः ।[7]
३. वर्गयमानां प्रथमा अल्पप्राणा इतरे सर्वे महाप्राणाः ।[8]

---

१. उद्धृतं न्यासे (१।१।९, पृ० ५९) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५७) च ।

२. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० सूत्र १, पृष्ठ ८) पदमञ्जर्यां (प्रत्या० १, पृष्ठ १८) च ।

३. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० १, पृ० ८) पदमञ्जर्यां (प्रत्या १, पृ० १८) च ।

४. उद्धृतं पदमञ्जर्याम् (प्रत्या० १, पृ० १८) । न्यासे तु 'ताभ्यामपि ऐ औ' इत्येवं पाठः ।

५. उपलब्धे पाठ 'ताभ्यामकारः इत्यपपाठः 'ताभ्यामप्याकारः' इत्येव न्यासे (प्रत्या० १; पृ० ८) पदमञ्जर्यां (प्रत्या० १, पृ० १८) च पाठः ।

६. 'संवृतोऽकारः' इत्येवं न्यासे (प्रत्या० १, पृ० ८ पदमञ्जर्यां (प्रत्या० १, पृ० १८) च पाठः ।

७. उद्धृतं न्यासे (१।१।९, पृष्ठ ५७; १।१।५०, पृष्ठ ८५) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५७) च ।

८. 'वर्गयमानां प्रथमेऽल्पप्राणा इतरे महाप्राणाः' इत्येवं पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५७) न्यासे (वर्ग्ययमानां पाठा० १।१।९, पृष्ठ ५७) च पठ्यते ।

४. वर्गाणां तृतीयचतुर्था अन्तस्था हकारानुस्वारौ यमौ च तृतीयचतुर्थौ नासिक्याश्च संवृतकण्ठा नादानुप्रदाना घोषवन्तश्च ।[1]
५. वर्गयमाना तृतीया अन्तस्थाश्चल्पप्राणा इतरे सर्वे महाप्राणाः ।[2]
६. यथातृतीयास्तथा पञ्चमाः ।[3]
७. आनुनासिक्यमेषामधिको गुणः ।[4]
८. कादयो मावसानाः स्पर्शाः ।[5]
९. यादयोऽन्तस्थाः ।[6]
१०. शादय उष्माणः ।[7]
११. सस्थानेन द्वितीयाः ।[8]
१२. हकारेण चतुर्थाः ।[9]
१३. इत्येष बाह्यः प्रयत्नः ।

## ५—स्थानपीडनप्रकरणम्

१. तत्र स्पर्शयमवर्णकारो वायुरयःपिण्डवत् स्थानमभिपीडयति ।

---

१. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० ५, पृष्ठ २५, १।१।९, पृष्ठ ५७; १।१।५०, पृष्ठ ८५) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५७) च । पदमञ्जर्यां न्यासे (१।१।९, पृष्ठ ५७) उद्धरणे 'नासिक्याश्च' पदं नास्ति) ।

२. उद्धृतं न्यासे (१।१।९, पृष्ठ ५७,; १।१।५०, पृष्ठ ९५—पूर्वोद्धरणे 'वर्ग्य' पाठः) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५८—'सर्वे' पदं नास्ति) च ।

३. उद्धृतं न्यासे (प्रत्या० ५, पृष्ठ २५; १।१।९, पृष्ठ ५७,) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५८) च ।

४. उद्धृतं न्यासे (१।१।९, पृष्ठ ५७) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृष्ठ ५८) च ।

५. उद्धृतं न्यासे (१।१।९, पृ० ५७) पदमञ्जर्यां (१।१।९ पृष्ठ ५७) च ।

६. न्यासे (१।१।९, पृ० ५७) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५७) च 'यरलवा अन्तस्थाः' इत्येवं पठ्यते, सोऽर्थतोऽनुवादो द्रष्टव्यः ।

७. उद्धृतं न्यासे (१।१।५० पृष्ठ ९६, पदमञ्जर्यां (१।१।५०, पृष्ठ ९७) च । यत्तु न्यासे (१।१।९, पृष्ठ ५७) पदमञ्जर्यां (१।१।९, पृ० ५७) च 'शषसहा ऊष्माणः' इत्येवं पाठ उपलभ्यते सोऽर्थतोऽनुवादो द्रष्टव्यः ।

८. उद्धृतं न्यासे (१।१।५०, पृष्ठ ९६, ९७) पदमञ्जर्यां (१।१।५० पृष्ठ ९७) च ।

९. उद्धृतं न्यासे (१।१।५०, पृ० ९६,९७) पदमञ्जर्यां (१।१।५०,९७) च ।

२. अन्तस्थवर्णकारो वायुर्दारुपिण्डवत् ।
३. ऊष्मस्वरवर्णकारो[1] वायुरूर्णापिण्डवत् ।

## ६—वृत्तिकारप्रकरणम्

१. एवं व्याख्याने वृत्तिकाराः पठन्ति—अष्टादशप्रभेदमवर्णकुलमिति । तत्कथमुक्तम्
२. ह्रस्वदीर्घप्लुतत्वाच्च त्रैस्वर्योपनयेन च ।
आनुनासिक्यभेदाच्च संख्यातोऽष्टादशात्मकः ।। इति ।।
३. एवमिवर्णादयः ।
४. लृवर्णस्य दीर्घा न सन्ति ।[2]
५. तं द्वादशप्रभेदमाचक्षते ।[3]
६. यदृच्छाशब्देऽशक्तिजानुकरणे वा यदा दीर्घाः स्युस्तदाऽष्टादशप्रभेदं ब्रुवते क्लृपक इति ।
७. सन्ध्यक्षराणां ह्रस्वा न सन्ति ।[4]
८. तान्यपि द्वादशप्रभेदानि ।[5]
९. छन्दोगानां सात्यमुग्रिराणायनीया अर्धमेकारमर्धमोकारं [च] पठन्ति ।[6]
१०. तेषामप्यष्टादशप्रभेदानि ।
११. अन्तस्था द्विप्रभेदा रेफवर्जिताः सानुनासिका निरनुनासिकाश्च ।[7]

---

१. मूल कोशेऽत्र '०वर्णकरो०' पाठः । पूर्वत्र तु० '०वर्णकारो०' इत्येव दृश्यते ।
२. उद्धृतं काशिकायाम् ( १।१।९ ) ।
३. उद्धृतं काशिकायाम् ( १।१।९ ) ।
४. उद्धृतं काशिकायाम् ( १।१।९ ) । 'पाणिनीयेऽपि' इत्येवं कृत्वोद्धृतः तैत्तिरीयप्रातिशाख्यस्य त्रिरत्नभाष्ये (मैसूर सं० पृ० ४५०)
५. उद्धृतं काशिकायाम् ( १।१।९ ) ।
६. तुलना कार्या—ननु च भोश्छन्दोगानां सात्युमुग्रिराणायनीया अर्धमेकारमर्धमोकारं चाधीयते इति । महाभाष्ये प्रत्या० ३; १।१।४७ सूत्रे च ।
७. स्वल्पपाठान्तरेणोद्धृतं काशिकायाम् ( १।१।९ ) पदमञ्जर्यां (प्रत्या० ६, पृ० ३३ ) च ।

१२. रेफोष्मणां सवर्णा न सन्ति ।[1]
१३. वर्ग्यो वर्ग्येण सवर्णः ।[2]

## ७—प्रक्रमप्रकरणम्

१. एष क्रमो वर्णानाम् ।
२. तत्रैषां स्थानकरणप्रयत्नानां कथंप्रसिद्धिरित्युच्यते ।
३. इह यत्र स्थाने वर्णा उपलभ्यन्ते तत् स्थानम् ।
४. येन निर्वृत्यन्ते तत् करणम् ।
५. प्रयतनं प्रयत्नः ।[3]
६. उत्साहः[4] प्रयत्नः ।
७. स्पृष्टतादि वर्णगुणः ।

## ८—नाभितलप्रकरणम्

१. [5]तत्र नाभिप्रदेशात् प्रयत्नप्रेरितः प्राणो[6] नाम वायुरुर्ध्वंमाक्रामन्नुरआदीनां स्थानानामन्यतमस्मिन् स्थाने प्रयत्नेन विधार्यते । विधार्यमाणः सोऽपि तत्स्थानानि विहन्ति[7] । तस्मात् स्थानाभिघाताद् ध्वनिरुत्पद्यत आकाशे, सा वर्णश्रुतिः । स वर्णस्यात्मलाभः ।

---

१. उद्धृतं महाभाष्ये ( प्रत्या० ५ ) काशिकायां ( १।१।९ ) पदमञ्जर्यां ( प्रत्या० ५ ) न्यासे ( प्रत्या० ५ ) च ।

२. उद्धृतं महाभाष्यदीपिकायां (पृष्ठ १८४ हस्त०) काशिकायां (१।१।९) च

३. उद्धृतं महाभाष्ये ( १।१।९ ) ।

४. अत्र 'उत्सादः' इति पाठोऽपेक्ष्यते । उत्तरत्र (८।२) अनुदात्तलक्षणे 'गात्राणां प्रसन्नत्वम्' (प्रकर्षेण सन्नत्वं=शैथिल्यम्' 'गात्रस्य संस्रवम्' पाठौ दृश्येते । तद्वाचकोऽत्र 'उत्साद' शब्द एवेहयुक्तः, न तूत्साहशब्दः ।

५. न्यासे (१।१।९, पृष्ठ ५६,५७) ऽस्य प्रकरणस्य १–२३ सूत्राण्युद्धृतानि ।

६. प्राणो नाम उर्ध्वमाक्रमन्नुरःप्रभृतीनामन्यतमस्मिन्—न्यासे लघुपाठे तु 'प्राणो नाम' इत्येव पठ्यते । कोशे 'प्राणो नामि वायु०' इत्यपपाठः ।

७. स विधार्यमाणः स्थानमभिहन्ति । ततः—न्यासे ।

२. तत्र वर्णानामुत्पद्यमाने[1] यदा स्थानकरणप्रयत्नपर्यन्तं परस्परं स्पृशति[2] सा स्पृष्टता ।

३. यदेषत् स्पृशति[3] सा ईषत्स्पृष्टता ।

४. यदा दूरेण स्पृशति[4] सा विवृता ।।[5]

५. यदा सामीप्येन स्पृशति[6], सा संवृता ।[7]

६. एषोऽन्तः प्रयत्नः ।[8]

७. अथ बाह्यः प्रयत्नः ।[8]

८. स एवेदानीं प्राणो [9]नाम वायुरुर्ध्वमाक्राम्य मूर्ध्नि प्रतिहते[10] निवृत्तो भवति तदा कोष्ठे[11] संहन्यमाने[12] गलबिलस्य संवृतत्वात् संवारो नाम वर्णधर्मो जायते[13], विवृतत्वाद् विवारः ।

९. तौ संवारविवारौ ।[14]

१०. तत्र यदा [15]कण्ठविलं संवृतत्वं तदा नादो जायते ।

११. विवृते तु कण्ठबिले श्वासोऽनुजायते ।[16]

---

१. वर्णध्वनावुत्पद्यमाने—न्यासे

२. ० प्रयत्नाः परस्परं स्पृशन्ति—न्यासे ।

३. ईषद् यदा स्पृशन्ति—न्यासे ।

४. दूरेण यदा स्पृशन्ति—न्यासे तु चतुर्थपञ्चमसूत्रयोः पौर्वापर्यं विद्यते ।

५. द्रष्टव्यमस्यैव प्रकरणस्य २६ षड्विंशं सूत्रम् ।

६. समीप्येन यदा स्पृशन्ति—न्यासे ।

७. द्रष्टव्यमत्रास्यैव २६ षड्विंशं सूत्रम् ।

८. नास्ति सूत्रम्—न्यासे ।

९. स एव प्राणो नाम वायुरूर्ध्वमाक्रामन्—न्यासे अत्रापिकोशे 'प्राणा नाभि-वायु०' इत्यपपाठः । १०. प्रतिहतो०—न्यासे ।

११. अत्र 'कोष्ठे' इत्यस्य स्थाने 'कण्ठे' पाठो युक्तः प्रतिभाति ।

१२. निवृत्तो यदा कोष्ठमभिहन्ति तदा कोष्ठेऽभिहन्यमाने—न्यासे ।

१३. वर्णधर्म उपजायते—न्यासे ।

१४. नास्ति सूत्रं—न्यासे ।

१५. अत्र 'कण्ठविलं संवृतं' इति शुद्ध पाठो ज्ञेयः संवृते गलविलेऽव्यक्तः शब्दो नादः—न्यासे । न्यासेऽर्थतोऽनुवादः स्यात् ।

१६. विवृते श्वासः—न्यासे । न्यासेऽर्थतोऽनुवादः स्यात् ।

१२. तौ श्वासनादावनुप्रदानावित्याचक्षते ।[1]

१३. अन्ये श्वासनादानुप्रदानं व्यञ्जने नादवत्[2] ।

१४. तत्र यदा नाभिस्थलजध्वनौ[3] नादोऽनुप्रदीयते तदा नादध्वनिसंसर्गाद्[4] घोषो जायते ।

१५. यदा श्वासोऽनुप्रदीयते तदा श्वास[ध्वनि]संसर्गाद्[5] अघोषो: जायते ।[6]

१६. सा घोषवदघोषता ।[7]

१७. महति वायौ महाप्राणः ।

१८. अल्पे वायावल्पप्राणः ।

१९. साल्पप्राणमहाप्राणता ।[8]

२०. [यत्र] महाप्राणत्वम् ऊष्माणस्ते ।[9]

२१. तत्र[10] यदा सर्वाङ्गानुसारिप्रयत्नस्तीव्रो भवति, तदा गात्राणां[11] निग्रहः, कण्ठबिलस्य चाल्पत्वं[12] स्वरस्य च वायोस्तीव्रगतित्वाद् रौक्ष्यं भवति—तमुदात्तमाचक्षते ।

२२. यदा मन्दः प्रयत्नो भवति तदा गात्राणां[13] प्रसन्नत्वं, कण्ठबिलस्य च

---

१. तौ श्वासनादानुप्रदानाविति केचिदाचक्षते—न्यासे ।

२. अन्ये तु ब्रुवते अनुप्रदानमनुस्वानो घण्टानिर्ह्रादवत्—न्यासे ।

३. अत्र 'स्थानभिघातजध्वनौ' इति शुद्धः पाठो ज्ञेयः । यदा स्थानाभिघातजे ध्वनौ—न्यासे ।

४. ० ध्वनिसंगाद्—न्यासे

५. ० ध्वनिसंगाद्—न्यासे ।

६. जायते—नास्ति न्यासे ।

७. सूत्रं नास्ति—न्यासे ।

८. सूत्रं नास्ति—न्यासे ।

९. सूत्रं नास्ति—न्यासे ।

१०. तत्र—नास्ति । यदा सर्वाङ्गानुसारी—न्यासे ।

११. गात्रस्य—न्यासे ।

१२. कण्ठविवरस्य चाणुत्वं—न्यासे ।

१३. गात्रस्य स्रंसनं—न्यासे ।

महत्वं[1] स्वरस्य च वायोर्मन्दगतित्वात् स्निग्धता भवति। तमनुदात्तमाचक्षते।

२३. उदात्तानुदात्त[2]सन्निकर्षात् स्वरित इति।

२४. स एवं प्रयत्नोऽभिनिवृत्तः कृत्स्नः प्रयत्नो भवति।

२५. स एवमापिशलेः पञ्चदशभेदाख्या वर्णधर्मा भवन्ति।

२६. तद्यथा—स्पृष्टता ईषत्स्पृष्टता विवृता संविवृता च।
संवारविवारौ श्वासनादौ घोषवदघोषता।
अल्पप्राणमहाप्राणता उदात्तानुदात्तस्वरिता इति।

२७. इदानीं शिक्षाग्रन्थः श्लोकैरुपसंह्रियते—

२८. अष्टौ स्थानानि वर्णानामुरः कण्ठः शिरस्तथा।
जिह्वामूलं च दन्ताश्च नासिकोष्ठौ च तालु च॥

२९. स्पृष्टत्वमीषत्स्पृष्टत्वं संवृतत्वं तथैव च।
विवृतत्वं च वर्णानामन्तःकरणमुच्यते॥

३०. कालो विवारसंवारौ श्वासनादावघोषता।
घोषोऽल्पप्राणता चैव महाप्राणः स्वरास्त्रयः॥

३१. बाह्यं करणाहुस्तान् वर्णानां वर्णवेदिनः॥

॥ इति पाणिनीयशिक्षासूत्राणां वृद्धपाठः समाप्तः॥

---

१. 'महत्वं' इत्येव न्यासे। कोशे 'बहुत्वं' इत्यपपाठः।

२. उदात्तानुदात्तस्वरसन्निकर्षात्—न्यासे।

# अथ पाणिनीयशिक्षा

[ लघु-पाठ[1] ]

१. आकाशवायुप्रभवः शरीरात्
समुच्चरन् वक्त्रमुपैति नादः ।
स्थानान्तरेषु प्रविभज्यमानो
वर्णत्वमागच्छति यः स शब्दः ।

२. तमक्षरं ब्रह्म परं पवित्रं
गुहाशयं सम्यगुशन्ति विप्राः ।
स श्रेयसा चाभ्युदयेन चैव
सम्यक् प्रयुक्तः पुरुषं युनक्ति ।

३. [वर्णास्] त्रिषष्टिः ।

४. स्थानमिदं, करणमिदं,
प्रयत्न एष द्विधाऽनिलः
स्थानं पीडयति, वृत्तिकारः
प्र क्रम एषो, ऽथ नाभितलात् ॥

## १—स्थानप्रकरणम्

१. अकुहविसर्जनीयाः कण्ठ्याः ।

२. हविसर्जनीयावुरस्यावेकेषाम् ।

---

१. पाणिनीयशिक्षासूत्राणामयं पाठो श्रीमद्भगवत्पाददयानन्दसरस्वतीभिर्महता प्रयत्नेनोपलभ्य १९३६ वैक्रमाब्दे आर्यभाषयाऽनूद्य "वर्णोच्चारण-शिक्षा" नाम्ना प्रकाशितः । भगवत्पादैरस्याः शिक्षाया यः कोश उपलब्ध आसीत् स मध्ये-मध्ये लेखक-दोषात् त्रुटितः, अन्ते च खण्डितोऽभूत् । विशेषो भूमिकायां द्रष्टव्यः ।

३. जिह्वामूलीयो जिह्व्यः।
४. कवर्गं ऋवर्णश्च जिह्व्यः।
५. सर्वमुखस्थानमवर्णमित्येके।
६ कण्ठ्यानास्यामात्रानित्येके।
७. इचुयशास्तालव्याः।
८. ऋटुरषा मूर्धन्याः।
९. रेफो दन्तमूलीय एकेषाम्।
१०. दन्तमूलस्तु तवर्गः।
११. लृतुलसा दन्त्याः।
१२. वकारो दन्तोष्ठ्यः।
१३. सृक्विणीस्थानमेकेषाम्।
१४. उपूपध्मानीया ओष्ठ्याः।
१५. अनुस्वारयमा नासिक्याः।
१६. कण्ठनासिक्यमनुस्वारमेके।
१७. यमाश्च नासिक्यजिह्वामूलीया एकेषाम्।
१८. एदैतौ कण्ठ्यतालव्यौ।
१९. ओदौतौ कण्ठ्योष्ठ्यौ।
२०. ङञणनमाः स्वस्थाननासिकास्थानाः।
२१. द्वे द्वे वर्णे सन्ध्यक्षराणामारम्भके भवतइति।
२२. सरेफ ऋवर्णः।

## २—करणप्रकरणम्

१. जिह्व्यतालव्यमूर्धन्यदन्त्यानां जिह्वा करणम्।
२. जिह्वामूलेन जिह्व्यानां तद्ध्येषामभ्यासम्।
३. [जिह्वामध्येन तालव्यानाम्]।[1]
४. जिह्वोपाग्रेण मूर्धन्यानाम्।
५. जिह्वाग्राधः करणं वा।
६. जिह्वाग्रेण दन्त्यानाम्।
७. इत्येतत् करणम्।

---

१. लेखकदोषात् सूत्रमिदं नष्टं स्यात्।

## ३—अन्तःप्रयत्नप्रकरणम्

१. प्रयत्नोऽपि द्विविधः ।
२. आभ्यन्तरो बाह्यश्च ।
३. आभ्यान्तरस्तावत् ।
४. स्पृष्टकरणाः स्पर्शाः ।
५. ईषत्स्पृष्टकरणा अन्तस्थाः ।
६. ईषद्विवृतकरणा ऊष्माणः ।
७. विवृतकरणा वा ।
८ विवृतकरणाः स्वराः ।
९. संवृतस्त्वकारः ।
१०. इत्येषोऽन्तःप्रयत्नः ।

## ४—बाह्यप्रयत्नप्रकरणम्

१. अथ बाह्याः प्रयत्नाः ।
२. वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसविसर्जनीयजिह्वामूलीयोपध्मानीया यमौ च प्रथमद्वितीयौ विवृतकण्ठाः श्वासानुप्रदानाश्चाघोषाः ।
३. एके अल्पप्राणा इतरे महाप्राणाः ।
४. वर्गाणां तृतीयचतुर्था अन्तस्था हकारानुस्वारौ यमौ च तृतीयचतुर्थौ नासिक्याश्च संवृतकण्ठा नादानुप्रदाना घोषवन्तश्च ।
५. [एकेऽन्तस्थाश्चाल्पप्राणा इतरे सर्वे महाप्राणाः] ।[1]
६. यथा तृतीयास्तथा पञ्चमाः ।
७. आनुनासिक्यमेषामधिको गुणः ।
८. शादय ऊष्माणः ।
९. [स]स्थानेन द्वितीयाः
१०. हकारेण चतुर्थाः ।

---

१. लेखकप्रमादात् सूत्रमिदं नष्टं स्यात् ।

## ५—स्थानपीडनप्रकरणम्

१. तत्र स्पर्शयमवर्णकारो वायुरयःपिण्डवत् स्थानमभिपीडयति ।
२. अन्तस्थवर्णकारो वायुर्दारुपिण्डवत् ।
३. ऊष्मस्वरवर्णकारो वायुरूर्णापिण्डवत् ।
४. उक्ताः स्थानकरणप्रयत्नाः ।[1]

## ६—वृत्तिकारप्रकरणम्

१. अवर्णो ह्रस्वदीर्घप्लुतत्वाच्च त्रैस्वर्योपनयेन चानुनासिक्यभेदाच्च संख्यातोऽष्टादशात्मकः ।
२. एवमिवर्णादयः ।
३. लृवर्णस्य दीर्घा न सन्ति ।
४. तं द्वादशभेदमाचक्षते ।
५. यदृच्छाशब्देऽशक्तिजानुकरणे वा यदा दीर्घाः स्युस्तदाऽष्टादशप्रभेदं ब्रुवते क्लृपक इति ।
६. सन्ध्यक्षराणां ह्रस्वा न सन्ति ।
७. तान्यपि द्वादशप्रभेदानि ।
८. अन्तस्था द्विप्रभेदा[2] रेफवर्जिताः सानुनासिका निरनुनासिकाश्च ।
९. रेफोष्मणां सवर्णा न सन्ति ।
१०. वर्ग्यो वर्ग्येण सवर्णः ।

## ७—प्रक्रमप्रकरणम्

१. एष क्रमो वर्णानाम् ।
२. तथैते कौशिकीयाः श्लोकाः[3]—

---

१. सप्तमप्रकरणे सूत्रमिदं पुनः पठ्यते, वृद्धपाठे सूत्रमिदं न त्विह पठ्यते न च सप्तमप्रकरणे ।

२. पूर्वत्र चतुर्थपञ्चमयोः सूत्रयोः 'भेद' इत्येव पठ्यते ।

३. पाणिनीयशिक्षाया वृद्धपाठे २–५ सूत्राणि न सन्ति । आपिशलशिक्षायामपि

३. सर्वान्तेऽयोगवाहत्वाद् विसर्गादिरिहाष्टकः ।
अकार उच्चारणार्थो व्यञ्जनेष्वनुबध्यते ॥
४. ≍क≍पयोः कपकारौ च तद्वर्गीयाश्रयत्वतः ।
पलिक्क्नी चख्ख्नतुर्जग्ग्मिमर्जघ्घ्नुरित्यत्र यद्वपुः ॥
५. नासिक्येनोक्तं कादीनां त इमेऽयमाः ।
तेषामुकारः संस्थानवर्गीयलक्षकः ।
६. उक्ताः स्थानकरणप्रयत्नाः ।[1]
७. इह यत्र स्थाने वर्णा उपलभ्यन्ते तत् स्थानम् ।
८. येन निर्वर्त्यन्ते तत् करणम् ।
९. प्रयतनं प्रयत्नः ।

## ८—नाभितलप्रकरणम्

१. तत्र नाभिप्रदेशात् प्रयत्नप्रेरितः प्राणो नाम वायुरूर्ध्वमाक्रामन्नुरआदीनां स्थानानामन्यतमस्मिन् स्थाने प्रयत्नेन विधार्यते ।............[2]
..........................................................................................
..........................................................................................

[इति पाणिनीयशिक्षासूत्राणां लघुपाठः]

...नि पठ्यन्ते । तेन लघुपाठ एषां सत्ता सन्दिह्यते । कदाचित् कस्मिंश्चित् कोशे सूत्राण्येतानि केनचित् पाठकेन प्रान्ते लिखितानि स्युः, तस्मात् कोशात् प्रतिलिपिकर्त्रा मध्ये प्रक्षिप्तानि स्युरिति संभाव्यते ।

१. वर्णोच्चारणशिक्षायामित आरभ्याऽऽप्रकरणान्तानि सूत्राण्यष्टप्रकरणादौ पठ्यन्ते ।

२. इतोऽग्र आप्रकरणान्तं पाठो नष्टः, कोशस्य त्रुटितत्वात् ।

# अथचान्द्रवर्णसूत्राणि

१. स्थानकरणप्रयत्नेभ्यो वर्णा जायन्ते ।
२. तत्र स्थानम्
३. कण्ठोऽकुहविसर्जनीयानाम् ।
४. कण्ठतालुकन् इदेदैताम् ।
५. कण्ठोष्ठम् उदोदौताम् ।
६. मूर्धा ऋटुरषाणाम् ।
७. दन्ता लृतुलसानाम् ।
८. नासिकाऽनुस्वारस्य ।
९. स्वस्थानानुनासिका ङञणनमाः ।
१०. ताल्विचुयशानाम् ।
११. ओष्ठावुपूपध्मानीयाम् ।[1]
१२. दन्तौष्ठं वकारस्य ।
१३. जिह्वामूलं जिह्वामूलीयस्य ।
१४. करणम् ।
१५. जिह्वाग्रं दन्त्यानाम् ।
१६. जिह्वोपाग्रं शिरस्यानाम् ।[2]
१७. जिह्वामध्यं तालव्यव्यानाम् ।
१८. शेषाः स्वस्थानकरणाः ।
१९. प्रयत्न द्विविधः ।
२०. आभ्यन्तरो बाह्यश्च ।
२१. तत्राभ्यन्तरः ।

---

१. 'ओष्ठौ उपध्मानीययोः' इत्यपपाठो घोषसंस्करणे ।

२. षोडशसप्तदशे सूत्रे घोषसंस्करणे वैपरीत्येन पठ्येते ।

२२. संवृतत्वं विवृतत्वं स्पृष्टत्वमीषत्स्पृष्टत्वं च ।
२३. संवृतत्वम् अकारस्य ।
२४. विवृतत्वं स्वराणामूष्मणां[1] च ।
२५. तेभ्यो विवृततरत्व[2]मेदोतोः ।
२६. ताभ्यामैदौतोः ।
२७. ताभ्यामप्यकारस्य ।
२८. स्पृष्टत्वं स्पर्शानाम् ।
२९. ईषत्स्पृष्टत्वमन्तस्थानाम् ।
३०. बाह्यः ।
३१. वर्गाणां प्रथमद्वितीयाः शषसविसर्जनीयजिह्वामूलीयोपध्मानीयाश्च विवृतकण्ठाः[3] श्वासानुप्रदाना अघोषाः ।
३२. प्रथमतृतीयपञ्चमा अन्तस्थाश्चाल्पप्राणाः ।
३३. इतरे[4] महाप्राणाः ।
३४. तृतीयचतुर्थपञ्चमाः सानुस्वारान्तस्थहकाराः संवृतकण्ठा नादानुप्रदाना घोषवन्तः ।
३५. द्वितीयचतुर्थाः शषसहाश्चोष्माणः ।
३६. कादयो मावसानाः स्पर्शाः ।
३७. अन्तस्था यरलवाः ।
३८. इत्येष वाह्यप्रयत्नः ।
३९. अत्र चावर्णो ह्रस्वो दीर्घः प्लुत इति त्रिधा भिन्नः ।
४०. प्रत्येकमुदात्तानुदात्तस्वरितभेदेन सानुनासिकनिरनुनासिकभेदेन चाष्टादशधा भवति ।
४१. एवमिवर्णोवर्णावृवर्णश्च ।[5]

---

१. ऊष्मणां स्वराणां च—घोषसंस्करणे ।
२. विवृतत्वं—घोषसं० ।
३. विवृतकण्ठा नादानु०—घोषसंस्करणेऽपपाठः, एषां श्वासानुप्रदानत्वात् ।
४. इतरे सर्वे—घोषसं० ।
५. 'एवमिवर्णोवर्णो ऋवर्णश्च' इत्यसंहितया पाठो घोषसंस्करणे ।

४२. लृवर्णस्य दीर्घा न सन्ति तेन स[१] द्वादशधा भवति ।

४३. संध्यक्षराणां ह्रस्वाभावात् तान्यपि द्वादशधा ।

४४. एकमात्रिको ह्रस्वः ।

४५. द्विमात्रिको दीर्घः ।

४६. त्रिमात्रिको प्लुतः ।

४७. उच्चैरुदात्तः ।

४८. नीचैरनुदात्तः ।

४९. समाहारः स्वरितः ।

५०. स्वस्थानानुनासिको निरनुनासिकश्च ।

५१. अन्तस्था द्विप्रभेदा रेफवर्जिताः साननासिका निरनुनासिकाश्च ।

॥ इति चन्द्रगोमिकृतानि वर्णसूत्राणि समाप्तानि ॥

---

१. 'स' इति नास्ति घोषसंस्करणे ।

# रामलाल कपूर ट्रस्ट द्वारा

## प्रकाशित वा प्रसारित प्रामाणिक ग्रन्थ

### वेद-विषयक ग्रन्थ

१. **ऋग्वेदभाष्य**—(संस्कृत हिन्दी; ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका सहित)—प्रतिभाग सहस्राधिक टिप्पणियां, १०-११ प्रकार के परिशिष्ट व सूचियां। प्रथम भाग ३५-००, द्वितीय भाग ३०-००, तृतीय भाग ३०-०० ।

२. **यजुर्वेदभाष्य-विवरण**—ऋषि दयानन्दकृत भाष्य पर पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत विवरण । प्रथम भाग अप्राप्य है । द्वितीय भाग मूल्य २५-००

३. **तैत्तिरीय-संहिता**—मूलमात्र, मन्त्र-सूची-सहित । ४०-००

४. **अथर्ववेदभाष्य**—श्री पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय कृत । ११-१३ काण्ड ३०-००; १४-१७ काण्ड २४-००; १८-१९ वां काण्ड २०-००; बीसवां काण्ड २०-०० ।

५. **ऋग्वेदादिभाष्य-भूमिका**—पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा सम्पादित एवं शतशः टिप्पणियों से युक्त । अप्राप्य

६. **ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका-परिशिष्ट**—भूमिका पर किये गए आक्षेपों के ग्रन्थकार द्वारा दिये गए उत्तर । मूल्य २-५०

७. **माध्यन्दिन (यजुर्वेद) पदपाठ**—शुद्ध संस्करण । २५-००

८. **गोपथ ब्राह्मण (मूल)**—सम्पादक श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि । अब तक प्रकाशित सभी संस्करणों से अधिक शुद्ध और सुन्दर संस्करण । मूल्य ४०-००

९. **वैदिक-सिद्धान्त-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक लिखित वेदविषयक १७ विशिष्ट निबन्धों का अपूर्व संग्रह । मूल्य ३०-००

१०. **ऋग्वेदानुक्रमणी**—वेङ्कट माधवकृत । इस ग्रन्थ में स्वर छन्द आदि आठ वैदिक विषयों पर गम्भीर विचार किया है । व्याख्याकार—श्री डा० विजयपाल जी विद्यावारिधि । उत्तम-संस्करण ३०-००; साधारण २०-००

११. **ऋग्वेद की ऋक्संख्या**—युधिष्ठिर मीमांसक मूल्य २-००

१२. **वेदसंज्ञा-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक १-००

१३. **वैदिक-छन्दोमीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक । नया संस्करण १५-००

१४. **वैदिक-स्वर-मीमांसा**—युधिष्ठिर मीमांसक अप्राप्य

१५. **वेदों का महत्त्व तथा उनके प्रचार के उपाय; वेदार्थ की विविध प्रक्रियाओं की ऐतिहासिक मीमांसा** (संस्कृत-हिन्दी) यु० मी० ५-००

१६. **वेदापि और शन्तनु के आख्यान का वास्तविक स्वरूप**—लेखक—श्री ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु । मूल्य १-००

१७. वेद और निरुक्त—श्री पं० [illegible] जी जिज्ञासु। मूल्य २-००

१८: निरुक्तकार और वेद में इति[illegible] „ १-००

१९. त्वाष्ट्री सरण्यू की वैदिक [illegible] का वास्तविक स्वरूप—लेखक—श्री पं० धर्मदेव जी निरुक्ताचार्य। १-००

२०. वेद में आर्य-दास-युद्ध-सम्बन्धी पाश्चात्य मत का खण्डन—लेखक श्री वैद्य रामगोपाल जी शास्त्री। अप्राप्य

२१. शिवशङ्करीय-लघुग्रन्थ पञ्चक—इसमें श्री पं० शिवशङ्कर जी काव्यतीर्थ लिखित वेदविषयक चतुर्दश-भुवन, वसिष्ठ-नन्दिनी, वैदिक-विज्ञान, वैदिक-सिद्धान्त और ईश्वरीय पुस्तक कौन ? नाम के पांच विशिष्ट निबन्ध हैं ५-००

२२. यजुर्वेद का स्वाध्याय तथा पशुयज्ञ समीक्षा—लेखक पं० विश्वनाथ जी वेदोपाध्याय। बढ़िया जिल्द २०-००, साधारण १६-००।

२३. वैदिक-पीयूष-धारा—लेखक श्री देवेन्द्रकुमार जी कपूर। चने हुए ५० मन्त्रों की प्रतिमन्त्र पदार्थ पूवक विस्तृत व्याख्या, अन्त में भावपूर्ण गीतों से युक्त। उत्तम जिल्द १५-००; साधारण १०-००।

२४. उरुज्योति—डा० श्री वासुदेवशरण अग्रवाल लिखित वेदविषयक स्वाध्याय योग्य निबन्धों का संग्रह। सुन्दर छपाई पक्की जिल्द १६-००

२५. वेदों की प्रामाणिकता—डा० श्रीनिवास शास्त्री। १-५०

२६. **ANTHOLOGY OF VEDIC HYMNS**—Sawami Bhomananda Sarasvati. अप्राप्य

## कर्मकाण्ड-विषयक ग्रन्थ

२७. बौधायन-श्रौत-सूत्रम् (दर्शपूर्णमास प्रकरण)—भवस्वामी तथा सायण कृत भाष्यसहित (संस्कृत) ४०-००

२८. दर्शपूर्णमास-पद्धति—पं० भीमसेन कृत, भाषार्थ सहित २५-००

२९. कात्यायनगृह्यसूत्रम्—(मूलमात्र) अनेक हस्तलेखों के आधार पर हमने इसे प्रथम वार छपा है। मूल्य २०-००

३०. संस्कार-विधि—शताब्दी संस्करण, ४६० पृष्ठ, सहस्राधिक टिप्पणियां, १२ परिशिष्ट। मूल्य लागतमात्र १२-००, राज-संस्करण १५-००। सस्ता संस्करण मूल्य ५-२५, अच्छा कागज सजिल्द ७-५०।

३१. अग्निहोत्र से लेकर अश्वमेध पर्यन्त श्रौत यज्ञों का संक्षिप्त परिचय (प्रथम भाग)—इस याग में अग्न्याधान, अग्निहोत्र, दर्शपूर्णमास, सुपर्णचिति सहित सोमयाग चातुर्मास्य और वाजपेय याग का वर्णन है। प्रथम भाग अप्राप्य। दूसरा भाग ४-००।

३२. संस्कारविधि-मण्डनम्—संस्कार-विधि की व्याख्या। लेखक—वैद्य श्री रामगोपाल जी शास्त्री। अप्राप्य

३३. वैदिक-नित्यकर्म-विधि—सन्ध्यादि पांचों महायज्ञ तथा बृहद् हवन के मन्त्रों की पदार्थ तथा भावार्थ व्याख्या सहित। यु०मी० ३-०० सजिल्द ४-००

३४. वैदिक-नित्यकर्म-विधि—(मूलमात्र) सन्ध्या तथा स्वस्तिवाचनादि बृहद् हवन के मन्त्रों सहित। मूल्य ०-७५

३५. पञ्चमहायज्ञ-प्रदीप—श्री पं० मदनमोहन विद्यासागर ३-००

३६. हवनमन्त्र—स्वस्तिवाचनादि सहित। ०-५०

३७. सन्ध्योपासनविधि—भाषार्थ सहित। अप्राप्य

३८. सन्ध्योपासनविधि—भाषार्थ तथा दैनिक यज्ञ सहित। ०-५०

## शिक्षा-निरुक्त-व्याकरण-विषयक ग्रन्थ

३९. वर्णोच्चारण-शिक्षा—ऋषि दयानन्द कृत हिन्दी व्याख्या ०-६०

४०. शिक्षासूत्राणि—आपिशल-पाणिनीय-चान्द्र शिक्षा-सूत्र। मूल्य ६-००; सजिल्द ८-००

४१. शिक्षाशास्त्रम्—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। ५-००

४२. अरबी-शिक्षाशास्त्रम्—„ „ ५-००

४३. निरुक्त-भाष्य—श्री पं० भगवद्दत्त कृत नैरुक्त=आधिदैविक प्रक्रियानुसारी तथा पाश्चात्य मत खण्डन सहित। अप्राप्य

४४. निरुक्त-श्लोकवार्त्तिकम्—केरलदेशीय नीलकण्ठ गार्ग्य विरचित। एक मात्र मलयालम लिपि में ताडपत्र पर लिखित दुर्लभ प्रति के आधार पर मुद्रित। आरम्भ में उपोद्घात रूप में निरुक्त-शास्त्र विषयक संक्षिप्त ऐतिह्य दिया गया हैं (संस्कृत)। सम्पादक—डा० विजयपाल विद्यावारिधिः। उत्तम कागज, शुद्ध छपाई तथा सुन्दर जिल्द सहित। १००-००

४५. निरुक्त-समुच्चय—आचार्य वररुचि विरचित (संस्कृत)। सं०—युधिष्ठिर मीमांसक। मूल्य १५-००

४६. अष्टाध्यायी—(मूल) शुद्ध संस्करण। मूल्य ३-००

४७. अष्टाध्यायी-परिशिष्ट—सूत्रों के पाठ-भेद तथा सूत्र-सूची। ५-००

४८. अष्टाध्यायी-भाष्य—(संस्कृत तथा हिन्दी) श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु कृत। प्रथम भाग २४-००, द्वितीय भाग २०-००, तृतीय भाग २०-००।

४९. धातुपाठ—धात्वादिसूची सहित, सुन्दर शुद्ध संस्करण। ३-००

५०. वामनीयं लिङ्गानुशासनम्—स्वोपज्ञ व्याख्यासहितम्। ८-००

५१. संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि—लेखक—श्री पं० ब्रह्मदत्त जिज्ञासु। प्रथम भाग १०-००, द्वितीय भाग (यु० मी०) १०-००।

५२. The Tested Easiest Method of Learning and Teaching Sanskrit (First Book)—यह पुस्तक श्री पं० ब्रह्मदत्त जी जिज्ञासु कृत 'बिना रटे संस्कृत पठन-पाठन की अनुभूत सरलतम विधि' भाग १ का अंग्रेजी अनुवाद है। अंग्रेजी भाषा के माध्यम से पाणिनीय व्याकरण में प्रवेश करने वालों के लिये यह आधिकारिक पुस्तक है। कागज और छपाई सुन्दर, सजिल्द २५-०० ।

५३. महाभाष्य—हिन्दी व्याख्या (द्वितीय अध्याय पर्यन्त) पं० यु० मी० । प्रथम भाग ५०-००, द्वितीय भाग २५-००, तृतीय भाग २५-०० ।

५४. उणादिकोष—ऋ० द० स० कृत व्याख्या, तथा पं० यु० मी० कृत टिप्पणियों, एवं ११ सूचियों सहित । अजिल्द १०-००, सजिल्द १२-००

५५. दैवम् पुरुषकारवार्त्तिकोपेतम्—लीलाशुकमुनि कृत १०-००

५६. लिट् और लुङ् लकार की रूप-बोधक सरलविधि— ३-००

५७. भागवृत्तिसंकलनम्—अष्टाध्यायी की प्राचीन वृत्ति ६-००

५८. काशकृत्स्न-धातु-व्याख्यानम्—संस्कृत रूपान्तर। यु० मी० १५-००

५९. काशकृत्स्न-व्याकरणम्—संपादक यु० मी० । ६-००

६०. शब्दरूपावली—बिना रटे शब्द रूपों का ज्ञान कराने वाली २-००

६१. संस्कृत-धातुकोश—पाणिनीय धातुओं का हिन्दी में अर्थ निर्देश। सं० युधिष्ठिर मीमांसक । मूल्य १०-००

६२. वाक्यपदीयम्—भर्तृहरिकृत स्वोपज्ञ व्याख्या तथा वृषभदेव कृत संक्षिप्त विवरण सहित । सम्पादक—श्री पं० चारुदेव शास्त्री एम० ए० । प्रथम भाग-ब्रह्मकाण्ड अप्राप्य । द्वितीय भाग—स्वोपज्ञ व्याख्या तथा पुण्यराज कृत व्याख्या सहित । संपादक श्री पं० चारुदेव शास्त्री । अप्राप्य

६३. अष्टाध्यायीशुक्लयजुःप्रातिशाख्ययोर्मतविमर्शः—डा० विजयपाल विरचित पीएच० डी० का महत्त्वपूर्ण शोध-प्रबन्ध (संस्कृत) । सुन्दर छपाई उत्तम कागज बढ़िया जिल्द सहित । मूल्य ५०-००

## अध्यात्म-विषयक ग्रन्थ

६४. ईश-केन-कठ-उपनिषद्—श्री वैद्य रामगोपाल शास्त्री कृत हिन्दी अंग्रेजी व्याख्या सहित । मूल्य—ईशो० १-५०; केनो० १-४०; कठो० ३-५०

६५. ध्यानयोग-प्रकाश—स्वामी दयानन्द सरस्वती के योग-विद्या के शिष्य स्वामी लक्ष्मणानन्द कृत । बढ़िया पक्की जिल्द, मूल्य १६-००

६६. अनासक्तियोग—लेखक पं० जगन्नाथ पथिक । १५-००

६७. आर्याभिविनय (हिन्दी)—स्वामी दयानन्द । गुटका सजिल्द ४-००

६८. Aryabhivinaya—English translation and notes (स्वामी भूमानन्द) दोरङ्गी छपाई । अजिल्द ४-००, सजिल्द ६-००

६९. वैदिक ईश्वरोपासना। मूल्य १-००

७०. विष्णुसहस्रनाम-स्तोत्रम् ( सत्यभाष्य-संहितम् ) —पं० सत्यदेव वासिष्ठ कृत आध्यात्मिक वैदिक भाष्य (४ भाग)। प्रति भाग १५-००

७१. श्रीमद्भगवद्-गीता-भाष्यम्—श्री पं० तुलसीराम स्वामी ६-००

७२. हंसगीता—महाभारत का एक आध्यात्मिक प्रसंग। अप्राप्य

७३. अगम्य पन्थ के यात्री को आत्मदर्शन—चंचल वहिन। ३-००

७४. आत्मा की जीवन-गाथा—श्री कर्मनारायण कपूर। अप्राप्य

७५. मानवता की ओर—श्री शान्तिस्वरूप कपूर के विविध विचारोत्तेजक सरल भाषा में लिखे गये लेखों का संग्रह। ४-००

## नीतिशास्त्र-इतिहास-विषयक ग्रन्थ

७६. वाल्मीकि रामायण—श्री पं० अखिलानन्द जी कृत हिन्दी अनुवाद सहित। अप्राप्य। अरण्य-किष्किन्धा काण्ड १०-००, युद्ध काण्ड १०-५०।

७७. शुक्रनीतिसार—व्याख्याकार श्री स्वा० जगदीश्वरानन्द जी सरस्वती। विस्तृत विषय सूची तथा श्लोक-सूची सहित उत्तम कागज, सुन्दर छपाई तथा जिल्द सहित। मूल्य ४५-००

७८. विदुर-नीति—युधिष्ठिर मीमांसक कृत प्रतिपद पदार्थ और व्याख्या सहित। बढ़िया कागज, पक्की सुन्दर जिल्द। मूल्य २५-००

७९. सत्याग्रह-नीति-काव्य—आ०स० सत्याग्रह १९३९ ई० में हैदराबाद जेल में पं० सत्यदेव वासिष्ठ द्वारा विरचित। हिन्दी व्याख्या सहित। ५-००

८०. भारतीय प्राचीन राजनीति—श्री पं० भगवद्दत्त जी। अप्राप्य

८१. संस्कृत व्याकरणशास्त्र का इतिहास—युधिष्ठिर मीमांसक कृत। अप्राप्य। नया परिष्कृत परिवर्धित संस्करण छप रहा है।

८२. संस्कृत व्याकरण में गणपाठ की परम्परा और आचार्य पाणिनि—लेखक—डा० कपिलदेव शास्त्री एम० ए०। सजिल्द १५-००

८३. ऋषि दयानन्द के पत्र और विज्ञापन—इस बार इस में ऋषि दयानन्द के अनेक नये उपलब्ध पत्र और विज्ञापन संगृहीत किये गए हैं। इस बार यह संग्रह चार भागों में छपा है। प्रथम दो भागों में ऋ० द० के पत्र और विज्ञापन आदि संगृहीत हैं। तीसरे और चौथे भाग में विविध व्यक्तियों द्वारा ऋ० द० को भेजे गये पत्रों का संग्रह है। प्रथम भाग—३५-००, दूसरा भाग ३५-००, तीसरा भाग ३५-००, चौथा भाग ३५-००

८४. विरजानन्द-चरित—लेखक—पं० भीमसेन शास्त्री एम० ए०। नया परिवर्धित और शुद्ध संस्करण। मूल्य ३-००

८५. ऋषि दयानन्द सरस्वती का स्वलिखित और स्वकथित आत्मचरित्र—सम्पादक पं० भगद्दत्त। मूल्य १-००

८६. आर्यसमाज के वेद-सेवक विद्वान्—लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय। अप्राप्य

८७. ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज की संस्कृत-साहित्य को देन—लेखक—डा० भवानीलाल भारतीय एम० ए०। सजिल्द १५-००

## दर्शन-आयुर्वेद-विषयक ग्रन्थ

८९. मीमांसा-शाबर-भाष्य—आर्षमतविमर्शिनी हिन्दी व्याख्या सहित। व्याख्याकार—युधिष्ठिर मीमांसक। प्रथम भाग ४०-००; द्वितीय भाग ३०-००; राज संस्करण ४०-००; तृतीय भाग ५०-००; चौथा भाग यन्त्रस्थ, शीघ्र प्रकाशित होगा।

९०. नाडी-तत्त्वदर्शनम्—श्री पं० सत्यदेव जी वासिष्ठ। मूल्य ३०-००

९१. षट्कर्मशास्त्रम्—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। अजिल्द ८-००

९२. परमाणु-दर्शनम्—(संस्कृत) जगदीशाचार्य। अजिल्द ८-००

## प्रकीर्ण-ग्रन्थ

९३. सत्यार्थप्रकाश—(आर्यसमाज-शताब्दी-संस्करण)—१३ परिशिष्ट ३५०० टिप्पणियां, तथा सन् १८७५ के प्रथम संस्करण के विशिष्ट उद्धरणों सहित। राजसंस्करण मूल्य ३५-००, साधारण संस्करण ३०-००। सस्ता संस्करण २०×३० सोलह पेजी। अप्राप्य

९४. दयानन्दीय लघुग्रन्थ-संग्रह—१४ ग्रन्थ, सटिप्पण, अनेक परिशिष्टों के सहित। लागतमात्र २५-००

९५. भागवत-खण्डनम्—ऋ० द० कृत की प्रथम कृति। अनु० युधिष्ठिर मीमांसक। ३-००

९६. संस्कृतवाक्यप्रबोध—ऋ० द० कृत। संस्कृत वाक्यप्रबोध पर पौराणिक पण्डित अम्बिकादत्त व्यास के किये गये आक्षेपों के पं० युधिष्ठिर मीमांसक द्वारा लिखित उत्तर के सहित। अप्राप्य

९७. संस्कृत-वाक्यप्रबोध—हिन्दी अंग्रेजी अनुवाद तथा आक्षेपों के उत्तर सहित। अप्राप्य

९८. ऋषि दयानन्द के शास्त्रार्थ और प्रवचन—इस में पौराणिक विद्वानों तथा ईसाई मुसलमानों के साथ ऋषि दयानन्द के अत्यन्त प्रामाणिक एवं महत्त्वपूर्ण शास्त्रार्थ दिये गये हैं। अनन्तर पूना में सन् १८७५ तथा बम्बई में सन् १८८२ में दिए गये व्याख्यानों का संग्रह है। इस से पूर्व के छपे पूना के व्याख्यान जो पूना-प्रवचन और उपदेश-मञ्जरी के नाम से हिन्दी में उपलब्ध होते हैं, उन का पाठ प्रमाणिक नहीं है। उस में अनुवादकों ने मनमाना घटाया-बढ़ाया है। हमने सन् १८७५ में व्याख्यान काल





में छपे हुए मूल मराठी भाषा में प्रकाशित ट्रैक्टो के अनुसार नया प्रामाणिक अनुवाद दिया है। बम्बई के २४ प्रवचनों का सारांश तो इसमें प्रथम बार प्रकाशित हुआ है। साथ में ८-१० विशिष्ट परिशिष्ट दिये हैं। सुन्दर सुदृढ़ कागज, पूरे कपड़े की सुन्दर जिल्द, मूल्य लागत-मात्र ३०-००

यही संस्करण दो भागों में **दयानन्द शास्त्रार्थ-संग्रह** और **दयानन्द प्रवचन-संग्रह** के रूप में अलग अलग पूर्ववत् सजिल्द भी प्राप्त हो सकते हैं। प्रत्येक का मूल्य १८-००

९९. **दयानन्द-शास्त्रार्थ-संग्रह**—संख्या ९८ के ग्रन्थ से पृथक् स्वतन्त्र रूप से छपा है। सं० डा० भवानीलाल भारतीय। सस्ता संस्करण १०-००

१०० **दयानन्द-प्रवचन-संग्रह**—(पूना-बम्बई-प्रवचन)। पूर्ववत् स्वतन्त्र रूप में छपा है। अनुवादक और सम्पा० पं० युधिष्ठिर मीमांसक। सस्ता संस्करण १०-००

१०१ **ऋषि दयानन्द सरस्वती के ग्रन्थों का इतिहास**—लेखक-युधिष्ठिर मीमांसक। नया परिशोधित परिवर्धित संस्करण। मूल्य ४०-००

२०२ **ऋषि दयानन्द और आर्यसमाज से सम्बद्ध कतिपय महत्त्वपूर्ण अभिलेख**—इसमें ऋ० द० के नये उपलब्ध पत्र, बम्बई आर्यसमाज के आदिम २८ नियमों की ऋ० द० कृत व्याख्या पं० गोपालराव हरि देशमुख लिखित दयानन्दचरित्र मराठी का हिन्दी रूपान्तर, आर्यसमाज काकड़वाड़ी बम्बई की पुरानी गुजराती में लिखित कार्यवाही (सन् १८८२ में जब ऋ० द० बम्बई में थे) का हिन्दी रूपान्तर आदि। मूल्य ८-००

१०३ **पञ्चमहायज्ञविधि**—ऋषि दयानन्द कृत अप्राप्य

१०४ **व्यवहारभानु**—ऋषि दयानन्द कृत। १-००

१०५ **आर्योद्देश्यरत्नमाला**—ऋषि दयानन्द कृत। ०-५०

१०६ **अष्टोत्तरशतनाममालिका**—सत्यार्थप्रकाश के प्रथम समुल्लास की सुन्दर प्रामाणिक विस्तृत व्याख्या। लेखक पं० विद्यासागर शास्त्री। ६-००

१०७. **कन्योपनयन-विधि**-अर्थात् 'कन्योपनयन-प्रतिषेध' ग्रंथ का खण्डन। श्री पं० महाराणीशंकर। अपने विषय की सुन्दर सामायिक पुस्तक। मूल्य ४-००; सजिल्द ६-००

१०८. **जगद् गुरु दयानन्द का संसार पर जादू**—मेहत्ता जैमिनि बी० ए० (स्व० विज्ञानानन्द सरस्वती)। ५८ वर्ष पश्चात् यह उपयोगी पुस्तक पुनः छापी गई है। मूल्य १-००

१०९ प्यारा ऋषि—श्री आनन्द
घटनाएं ।

११० आर्य-मन्तव्य-प्रकाश—महामहोपा
भाग ५-०० द्वितीय भाग ५-०० ।

१११ आर्यसमाज के दिग्गज विद्वानों का
में इतिहास है वा नहीं' विषय पर लाहौर
जी के सभापतित्व में हुआ था ।

११२ Vegetarianism V/s Meet:
मूल्य ०-५०

११३ अमीर सुधा—भक्त अमीचन्द कृत । मूल्य १-००

## शीघ्र प्रकाशित होने वाले ग्रन्थ

१—मीमांसा-शाबरभाष्य—व्याख्या—चतुर्थ भाग छप रहा है ।

२—वेदोक्त-संस्कार-प्रकाश—मूल (मराठी) लेखक श्री पं० विटठल गांवस्कर । हिन्दी अनुवादक श्री जगदेवसिंह जी आर्य, बम्बई । यह ऋ० द० कृत संस्कार-विधि का प्रमुख सहायक ग्रन्थ था । छप रहा है ।

३. संस्कृत व्याकरण शास्त्र का इतिहास—नया परिवर्धित एवं परिशोधित संस्करण । छप रहा है ।

४. ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका—ऋषि दयानन्द कृत ।

५—कात्यायनीय ऋक्सर्वानुक्रमणी—षड्गुरुशिष्य कृत वृत्ति सहित प्रथम वार वृत्ति का पूरा पाठ छप रहा है । प्रो० मेकडानल्ड ने लगभग ९० वर्ष पूर्व वृत्ति का संक्षेप छापा था । वह भी सम्प्रति दुर्लभ हो गया है । सम्पादक डा० श्री विजयपाल जी । (सम्पादनाधीन)

पुस्तक प्राप्ति स्थान

**[illegible]मलाल कपूर ट्रस्ट**

बहालगढ़, जिला सोनीपत (हरयाणा) १३१०२१